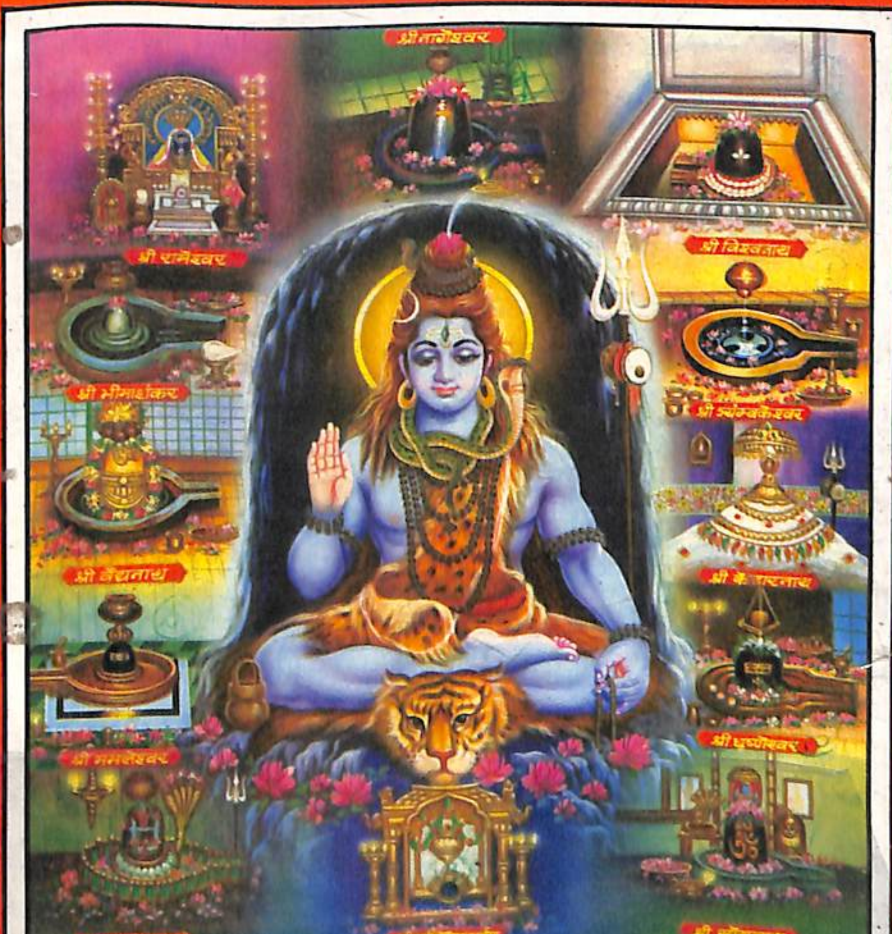
भगवान शंकर
१२ ज्योतिर्लिंग कथा

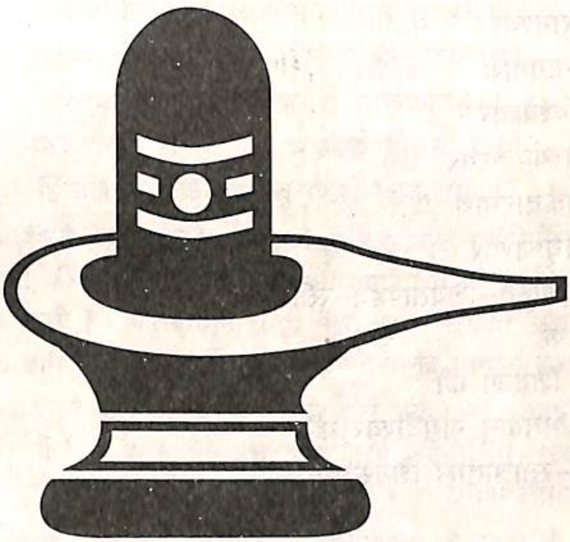


द्वादशज्योतिर्लिङ्गस्तोत्रम्

सौराष्ट्रदेशे विशदेऽतिरम्ये ज्योतिर्मयं चन्द्रकलावतंसम् ।
भक्तिप्रदानाय कृपावतीर्णं तं सोमनाथं शरणं प्रपद्ये ॥ १ ॥
श्रीशैलशृङ्गे विबुधातिसङ्गे तुलाद्रितुङ्गेऽपि मुदा वसन्तम् ।
तमर्जुनं मल्लिकपूर्वमेकं नमामि संसारसमुद्रसेतुम् ॥ २ ॥
अवन्तिकायां विहितावतारं मुक्तिप्रदानाय च सज्जनानाम् ।
अकालमृत्योः परिरक्षणार्थं वन्दे महाकालमहासुरेशम् ॥ ३ ॥
कावेरिकानर्मदयोः पवित्रे समागमे सज्जनतारणाय ।
सदैव मान्धातृपुरे वसन्तमोङ्कारमीशं शिवमेकमीडे ॥ ४ ॥
पूर्वोत्तरे प्रज्वलिकानिधाने सदा वसन्तं गिरिजासमेतम् ।
सुरासुराराधितपादपद्मं श्रीवैद्यनाथं तमहं नमामि ॥ ५ ॥
याम्ये सदङ्गे नगरेऽतिरम्ये विभूषिताङ्गं विविधैश्च भोगैः ।
सद्भक्तिमुक्तिप्रदमीशमेकं श्रीनागनाथं शरण प्रपद्ये ॥ ६ ॥
महाद्रिपार्श्वे च तटे रमन्तं सम्पूज्यमानं सततं मुनीन्द्रैः ।
सुरासुरैर्यक्षमहोरगाद्यैः केदारमीशं शिवमेकमीडे ॥ ७ ॥
सह्याद्रिशीर्षे विमले वसन्तं गोदावरीतीरपवित्रदेशे ।
यद्दर्शनात्पातकमाशु नाशं प्रयाति तं त्र्यम्बकमीशमीडे ॥ ८ ॥
सुताम्रपर्णीजलराशियोगे निबध्य सेतुं विशिखैरसंख्यैः ।
श्रीरामचन्द्रेण समर्पितं तं रामेश्वराख्यं नियतं नमामि ॥ ९ ॥
यं डाकिनीशाकिनिकासमाजे निषेव्यमाणं पिशिताशनैश्च ।
सदैव भीमादिपदप्रसिद्धं तं शङ्करं भक्तहितं नमामि ॥ १० ॥
सानन्दमानन्दवने वसन्तमानन्दकन्दं हतपापवृन्दम् ।
वाराणसीनाथमनाथनाथं श्रीविश्वनाथं शरणं प्रपद्ये ॥ ११ ॥
इलापुरे रम्यविशालकेऽस्मिन् समुल्लसन्तं च जगद्वरेण्यम् ।
वन्दे महोदारतरस्वभावं घृष्णेश्वराख्यं शरणं प्रपद्ये ॥ १२ ॥
ज्योतिर्मयद्वादशलिङ्गकानां शिवात्मनां प्रोक्तमिदं क्रमेण ।
स्तोत्रं पठित्वा मनुजोऽतिभक्त्या फलं तदालोक्य निजं भजेच्च ॥ १३ ॥

इति श्रीद्वादशज्योतिर्लिङ्गस्तोत्रं सम्पूर्णम्

भगवान शंकर
१२ ज्योतिर्लिंग कथा



Publishers :

Abhishek Printers & Publishers
New Delhi, Ph.: 6915113, 6821541
Fax : 011-3274731

मूल्य 20.00 रुपये

विषय सूची

अमरनाथ – 4/7/4

ज्योतिर्लिंग : ज्योति की महत्ता

हिमालय की काँगडा घाटी में 'ज्वालामुखी' नामक एक दिव्य स्थान है। पृथ्वी के गर्भ से निरन्तर प्रकाशित रहने वाली एक महान ज्योति वहाँ ऊपर उठ रही है। साक्षात् परमेश्वर – शुभंकर – शंकरजी उस तेजोमय ज्योति के रूप में प्रकट हुए है। उस पवित्र ज्योति के दर्शन के लिए भक्तगणों का वहाँ ताँता लगा रहता हैं

ज्योति का यह चमत्कार अनेक स्थानों पर दिखाई देता है। उन स्थानों पर दर्शन के हेतु मेले लगते है। वे स्थान निम्नप्रकार है :–

"सौराष्ट्रे सोमनाथंच श्री शैले मल्किार्जुनम्।
उज्जयिन्यां महाकालमोंकारममलेश्वरम्।।
परल्यां वैजनाथं च डाकिन्यां भीमाशंकरम्।
सेतुबंधे तु रामेशं, नागेशं दारूकावने।।
वाराणस्यां तु विश्वेशं त्रयंबकं गौतमी तटे।
हिमालये तु केदारं, घृसृणेशं शिवालये।।"

महादेवजी के अर्थात शंकर भगवान के इन बारह ज्योतिर्लिंग के तेजोमय और पवित्र स्थानों की महिमा अनोखी है। सभी ज्योतिर्लिंग के दर्शन हेतु भक्तगणों की कतारें लगी रहती है। अतिप्राचीन समय में ये स्थान संभवतः उस 'ज्वालामुखी' की तरह ही रहे होंगे परंतु अब वहाँ भव्य शिवमंदिरों का निर्माण हुआ है।

सागर तट पर दो, नदी के किनारे पर तीन, पर्वतों की ऊँचाई पर चार और मैदानी प्रदेशों में गाँवों के पास तीन इस तरह बारह ज्योतिर्लिंग बिखरे हुए रूप में दिखाई देते हैं। हर स्थान का वर्णन साक्षात्कार के साथ अनेक लोगों ने किया है। 15/9/03

उन शुभंकर – शंकर – ज्योति – शिवस्थानों के दर्शन से हमारा जीवन पुण्यमय, सुखी–समाधानी तथा कृतार्थ होता है, यह श्रद्धा है और अनुभव भी है। 232814

यद्यपि पृथ्वी में विद्यमान लिंग असख्य है तथापि प्रधान ज्योति लिंग द्वादश हैं – सौराष्ट्र में सोमनाथ, श्री शैल में मल्लिकार्जुन, उज्जैयनी में महाकाल, विंध्यप्रदेश में ओंकारेश्वर हिमालय श्रृंग पर केदार डाकिनी में भीम शंकर, वाराणसी में विश्वेष, गोमती तट पर त्रयम्बक, चिंताभूमि में वैद्यनाथ अयोध्या के दारूक वन में नागेश, सेतुबंध में रामेश और देवसरोवर में धुश्मेश। प्रातःकाल उठकर उन द्वादश ज्योति लिंग का स्मरण वाचन करने से आवागमन के चक्र से मुक्ति मिल जाती है। इन लिंगों की पूजा से सभी वर्णों के लोगों के दुःखों का नाश होता है। इन लिंगों पर चढ़ा नैवेद्य भक्षण करने से सारे पाप क्षण में ही भस्म हो जाते है।

वैसे देखा जाये तो ज्योतिर्लिंग के दर्शन करना हमारा नित्यकर्म ही होता है। सूर्य, अग्नि और दीपज्योत ये उस ज्योति के ही रूप होते है। उनके दर्शन का आनंद हमलोग हररोज प्राप्त करते है।

"ओम् तत्सवितुः वरेण्यं "इस गायत्री मंत्र में बुद्धि को प्रेरणा देनेवाले सूर्यभगवान के सर्वश्रेष्ठ तेजरूपी ध्यान के बारें में बताया है। इस मंत्र के जप–सामर्थ्य से मनुष्य की प्राणज्योति को अर्थात् आत्मज्योति को दिव्यशक्ति प्राप्त होती है।

सूर्यशक्ति का तेज तथा उससे प्राप्त उष्णता से कितने लाभ होते है यह स्पष्ट करना कठिन है। उस अतिभव्य – दिव्य ज्योति के सामर्थ्य से ही इस विश्व के सारे कार्यकलाप चलते हैं उस भास्कर – ज्योति को हम प्रणाम करते हैं, सुर्योपासना करते है।, उसे अर्घ्यदान करते है। सूर्य–ज्योति ही केवल एक सत्य मात्र है। वही एक नित्य है, बाकी सब मिथ्या है।

'अग्नि' भी एक महान ज्योति है! पश्थ्वीतल के सभी धर्म, उस अग्निज्योति के सामने नतमस्तक है। उसकी नित्य उपासना करते हैं। अग्नि के उपयोग, उसका महत्त्व और उसके उपकार के संबंध में जितना भी कहे, कम होगा।

सूर्य और अग्नि का दीपज्योति यह छोटा स्वरूप हैं "सा आज्मेन, वर्तिसंयुक्तं, वनिहनांयोजितं मया। दीपं गश्हाण दैवेश त्रैलोक्य तिमिरापह," इस तरह की महान ज्योति को हम प्रणाम करते है।

दीपज्योति के महत्त्व को हम भलीभाँति जानते हैं हम उस दीप की पूजा करते हैं। दीपोत्सव मनाते है। स्वागत–समारोह, मंगलकार्य आदि में दीप–ज्योति की अग्रकम से पूजा करते हैं।

"शुभं करोति कल्याणं, आरोग्यं धनसंपदा
शत्रुबुद्धि विनाशाय, दीपज्योति नमोस्तुते।"

इस ज्योति से हमारा, औरों का अंधःकार नष्ट हो जाता है। अज्ञानरूपी अंधःकार नष्ट होता है। और स्वधर्म सूर्य का दर्शन होकर मनोकामनाएँ पूर्ण होती है।

इस तरह बारह ज्योतिर्लिंग के दर्शन से, वहाँ के पावन वायुमण्डल और पवित्र यात्रा से सभी को सुख, शांति तथा समाधान प्राप्त होता है।

१. सौराष्ट्र में सोमनाथ



"सौराष्ट्र देशे विशदेऽतिरम्ये, ज्योतिर्मयं चंद्रकलासतंसम्।
भक्तिप्रदानाय कृपावतीर्णं तं सोमनाथं शरणं प्रपद्यते।।"

– श्रीमत् आद्य शंकराचार्य

"जय सोमनाथ! जय सोमनाथ।"

इस जयघोष से गुजरात में सौराष्ट्र के वेरावल बंदरगाह का और प्रभासपट्टण इस गाँव का परिसर गूँज उठता था।

साथ–साथ मंदिरघाट की सीढियों पर आकर टकरानेवाली समुद्री लहरों से जैसे कि 'जय शंकर, जय शंकर।' यह निकलनेवाली धीर–गंभीर आवाज और सुवर्ण–घंटानाद से निकलनेवाला – ओम् नमः शिवाय् ओम् नमः शिवाय्।' जयघोष से सारा परिसर भक्तिमय बन जाता था।

मंदिर की वह विशााल सुवर्णघंटा दो सौ मन सोने की थी और मंदिर के छपप्न खंभे हीरे, माणिक, पाचूख्वैडूर्य आदि रत्नों से जड़े हुए थे।

मंदिर के गर्भगशह में रत्नदीपों की जगमगाहट रात–दिन रहती थी और कनोजी इत्र से नंदादीप हमेशा प्रज्वलित रहता था। भंटार गशह में अनगिनत द्रव्य सुरक्षित था। 13/9/5

भगवान की पूजा–अभिषेक के लिए हरिद्वार, प्रयाग, काशी से गंगोदक 20/9/5 हररोज लाया जाता था। कश्मीर से फूल आते थे। नित्य की पूजा के लिए एक हजार ब्राह्मण–गण नियुक्त किए थे। मंदिर के दरबार में चलनेवाले नशत्य–गायन के लिए लगभग साडे–तीन सौ नशत्यांगनाएँ नियुक्त की थीं।

इस धार्मिक संस्थान को दस हजार गाँवों का उत्पादन ईनाम के रूप में मिलता था। श्रीशंकरजी के बारह ज्योतिर्लिंग में से सोमनाथ को आद्य ज्योतिर्लिंग

माना जाता है! यह स्वयंभू देवस्थान होने के कारण और हमेशा जागृत होने के कारण लाखों भक्तगण यहाँ आकर पवित्र–पावन बन जाते थे। भक्तगणों द्वारा समर्पित करोडों रूपयों की धनदौलत से देवस्थान का भंडार सदा भरा–भरा रहता था। साथ ही अग्निपूजक विदेशी व्यापारी लोगों ने अपने मुनाफे में से कुछ रकम इस पवित्र देवता के भंडार में समर्पित कर संपत्ति में अनगिनत वृद्धि की थी।

सौराष्ट्र के श्रीसोमनाथ का यह शिवतीर्थ, अग्नितीर्थ और सूर्यतीर्थ सर्वप्रथम चंद्रमा को प्रसन्न हुए। तब उसने भारत में सबसे पहले श्रीशंकरजी के दिव्य ज्योतिर्लिंग की स्थापना करके उस पर अतिसुंदर स्वर्णमंदिर बाँधा।

स्कंद–पुराण के प्रभासखंड में उसकी कथा का संदर्भ मिलता है। कथा इस प्रकार है:–

चन्द्रमा ने दक्ष की सत्ताईस पुत्रियों से विवाह करके एक मात्र रोहिणी में इतनी आसक्ति और इतना अनुराग दिखाया कि अन्य छब्बीस अपने को उपेक्षित और अपमानित अनुभव करने लगी। उन्होंने अपने पति से निराश होकर अपने पिता से शिकायत की तो पुत्रियों की वेदना से पीड़ित दक्ष ने अपने दामाद चन्द्रमा को दो बार समझाने का प्रयास किया परन्तु विफल हो जाने पर उसने चन्द्रमा को 'क्षयी' होने का शाप दिया। २१|९|०३

देवता लोग चन्द्रमा की व्यथा से व्यथित होकर ब्रह्माजी के पास जाकर उनसे शाप निवारण का उपाय पूछने लगे। ब्रह्माजी ने प्रभासक्षेत्र में महामृत्युंजय से वृषभध्वज शंकर की उपासना करना एकमात्र उपाय बताया। चन्द्रमा के छः मास तक शिव पूजा करने पर शंकर जी प्रकट हुए और चन्द्रमा को एक पक्ष में प्रतिदिन उसकी एक–एक कला नष्ट होने और दूसरे पक्ष में प्रतिदिन बढने का उन्होने वर दिया देवताओं पर प्रसन्न होकर उस क्षेत्र की महिमा बढ़ाने के लिए और चन्द्रमा (सोग) के यश के लिए सोमेश्वर नाम से शिवजी वहां अवस्थित हो गए। देवताओं ने उस स्थान पर सोमेश्वर कुण्ड की स्थापना की। इस कुण्ड में स्नान कर सोमेश्वर ज्योर्तिलिग के दर्शन पूजा से सब पापों से निस्तार और मुक्ति की प्राप्ति हो जाती है।

चन्द्रमा को सोम नाम से भी पहचाना जाता है। इसलिए यह ज्योतिर्लिंग सोमनाथ के नाम से मशहूर है। चंद्रमा को इस स्थान पर तेज प्राप्त हुआ। अतः इस स्थान को 'प्रभासपट्टण' इस नाम से भी जाना जाता है। \\१२

बाद में रावण ने रूपा का, कृष्ण भगवान ने चंदन का इस तरह श्रीसोमनाथ के मंदिर बाँधे। सोरटी सोमनाथ के परिसर में फैले अनेक पौराणिक स्थानों के आधार पर घटी कहानियाँ अंत में दी है। ६|१०|०३

श्रीसोमनाथ के इस वैभवसंपन्न पवित्र स्थान पर मुसलमानों के अनेक बार आक्रमण हुए। ७२२ ई. में सिंध का सूबेदार जुनामदने प्रथम आक्रमण करके अनगिनत खजाना लूटा।

चुंबकीय चमत्कार के कौशल्य से बीच में ही दिखाई देनेवाली श्रीसोमनाथ की भव्य मूर्ति गजनी के महमूद ने शुक्रवार दिनांक ११ मई १०२५ ई. में सुबह ६.४६ को तोड़ डाली, तबसे गजनी के महमूद को 'मूर्तिभंजक' कहा जाता है। इस दिन उसने १८ करोड़ का खजाना लूटा था। 26/10/01 (m)

१२६७ ई. में अल्लाउद्दिन खिलजी ने अपना सरदार अलतफखान को सोरटी सोमनाथ भेजकर मंदिर को तोडा–फोडा। १४७६ ई. में महमूद बेगडा, १५०३ ई. में दूसरे मुजफ्फर शाह ने और धर्मांध औरंगजेब ने १७०१ ई. में सोमनाथ का मंदिर भ्रष्ट किया, तोड़ फोड़ की, कईयों को कत्ल किया और अनगिनत संपत्ति लूट ली।

१७८३ ई. में शिवभक्त साध्वी अहिल्यादेवी होलकर ने सोमनाथ का नया मंदिर निर्माण किया। भारत की आजादी के बाद गुजरात के शेर, सरदार बल्लभभाई पटेल ने, महाराष्ट्र के काकासाहब गाडगीलजी की सलाह से श्रीसोमनाथ मंदिर का जीर्णोद्धार किया। 'भारतीय शिल्पकला की स्वर्गीय सुंदरता का एक बेजोड़ नमूना' इस भावना से विश्व का ध्यान इसकी ओर आकर्षित हो गया है। 27/10/01 (m

शुक्रवार दि. ११ मई १९५१ में सुबह ६.४६ को, इस मंदिर में श्रीसोमनाथ ज्योतिर्लिंग की प्राणप्रतिष्ठा, उस समय के भारत के राष्ट्रपति माननीय डा.राजेंद्र प्रसादजी के करकमलों द्वारा और वेदमूर्ति तर्कतीर्थ लक्ष्मणशास्त्री जोशीजी के वेदघोष से बड़ी धूमधाम से की गई

भारत का यह आद्य ज्योतिर्लिंग करोड़ों भक्तों का श्रद्धास्थाना है। लाखों यात्रियों की भीड यहाँ सदा लगी रहती है। अनेक सिद्ध–सत्पुरूषों का सत्संग लोगों को प्राप्त होता है। दाताओं के दान से श्रीसोमनाथजी के वैभव में फिर से वृद्धि होने लगी है। नास्तिक लोगों ने मंदिर को तहस–नहस किया था परंतु भारतीयों का श्रद्धाभाव और अभिमान कोई नहीं नष्ट कर सकता। उसका साक्षात् प्रतीक है। श्रीसोमनाथ ज्योतिर्लिंग!

समुद्रतटपर कठियावाड़ के प्रदेश में, प्रभासपट्टण के आसपास मंदिर, स्मारक और पौराणिक स्थान है। उनकी कथाएँ पुराणप्रसिद्ध है। उनमें से सूर्यमंदिर अतिप्राचीन है। उसमें मूर्ति नहीं है, लेकिन मंदिर की प्राचीन शिल्पकला कितनी उत्कृष्ट है यह वहाँ के भग्नावशेष पर दृष्टि डालने से मालूम होता है। 5||2

भद्रकाली मंदिर अतिप्राचीन है। उसके प्रवेशद्वार के पास, दाहिनी ओर की दीवारपर इक्यावन काव्यपंक्तियों का शिलालेख है। उसपर राजा कुमारपालने जो

मंदिर बाँधे और दानधर्म किए उनका संदर्भ खुदवाया गया है।

भल्लांतक (भालूका) तीर्थ—भगवान श्रीकृष्णजी के बाएँ पैर के अँगुठे पर व्याध के बाण से जहाँ खून बहा वही स्थान है यह भल्लांतक तीर्थ! यहाँ श्रीकृष्ण भगवान की मूर्ति है। इसी स्थानपर अर्जुन को सुभद्रा प्राप्त हुई। कार्तिक पूर्णिमा को यहाँ बडा मेला लगता है।

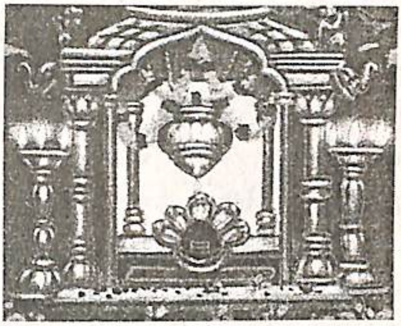
कठियावाड के इस कुशाव्रत में श्रीकृष्ण भगवान ने सोने की द्वारका का निर्माण किया। आगे चलकर इन्हीं कुश—दर्भ से मूसल बने जिनके प्रहारों से यादवों का विनाश हुआ। श्रीकृष्ण और बलराम इस घटना से उदास हुए । बलराम ने समुद्र में प्रवेश किया और एक समुद्र गुफा में घुसकर अपना अवतार समाप्त किया। आज भी वह गुफा दिखाई जाती है।

देहोत्सर्ग – इस स्थानपर हिरण्या नदी पर एक विशाल घाट बाँधा है। श्रीकृष्णजी का यहाँ अंत्यविधि किया गया था। इस स्थानपर अनेक स्तम्भोंपर आधारित एक भव्य स्मारक और गीतामंदिर भी निर्माण किया है।

श्रीकृष्णभगवान के पार्थिव देहपर जहाँ अग्निसंस्कार किया गया, उस स्थानपर भगवान की स्फटिक की मूर्ति की प्रतिष्ठापना की गई है। वहाँ खड़े रहकर जब हम श्रीकृष्णभगवान की मूर्ति का दर्शन लेते है तब श्रीकृष्णभगवान का पूरा जीवनवृत्तांत हमारे सामने खड़ा रहता है। मथुरा के बंदीग्रह में भगवान का जन्म हुआ, गोकुल में नंद के घर में बचपन बीता, बडा हुआ। उन्होनें कंस के दरबार में जाकर उसका वध किया। वृंदावन में उन्होने गोपियों के साथ रास रचायी। संदीपनी के आश्रम में रहकर विद्या प्राप्त की। नये नगर का निर्माण करके द्वारकाधीश बने। कुरूक्षेत्र में हुए महाभारत के युद्ध में अर्जुन के रथ का सारथ्य किया और पांडवों को विजयी किया। गीता के रूप में विश्व को अमर संदेश दिया। यादवों के गश्हकलह के बाद श्रीकृष्णभगवान ने व्याध के बाण का निमित्त लेकर अपना अवतारकार्य समाप्त किया। श्रीकृष्णभगवान का सत्संग जिन्हें प्राप्त हुआ वे धन्य हुए । पूर्ण पुरूष श्रीकृष्णजी का जीवन पट इस प्रकार मूर्तिका दर्शन करते समय आँखों के सामने खडा रहता है

प्रभासपट्टण के परिसर में ही प्राचीन काल में अगस्त्य मुनिने समुद्र प्राशन किया था। पांडव, जनमेजय, रावण आदि अनेक पुराणप्रसिद्ध व्यक्तियों ने इस भास्कर प्रभासपट्टण तीर्थ का दर्शन किया है। माघ महीने की शिवरात्रि के दिन सोमनाथ ज्योतिर्लिंग का महोत्सव बडे ठाठ—बाट से मनाया जाता है।

२. श्रीमल्लिकार्जुन



"श्री शैलशृंगे विविध प्रसंगे शेषाद्रिशृंगेपि सदावसन्तम्।
तमर्जुनं मल्लिकापूर्व मेनम् नमामि संसार समुद्रसेतुन्।।

" जय मल्लिकार्जुन ! जय मल्लिकार्जुन !"

इस जयघोष से आंध्र प्रदेश के कुर्नुल जिले के श्रीशैल – पहाड़ियाँ और पातालगंगा का परिसर जहाँ कदली–बिल्ब वन प्रदेश है, गूँज उठता है।

प्राचीन समय में इसी प्रदेश में भगवान श्रीशंकर आते थे। इसी स्थान पर उन्हानें दिव्य ज्योतिर्लिंग के रूप में स्थायी निवास किया। इस स्थान को कैलाश निवास कहते हैं।

कुमार कार्तिकेय पृथ्वी की परिक्रमा करके कैलाश पर लौटे तो नारदजी से गणेश के विवाह का वृतांत सुनकर रूष्ट हो गए और माता पिता के मना करने पर भी उन्हें प्रणाम कर क्रोच पर्वत पर चले गए। पार्वती के दुखित होने पर तथा समझाने पर भी धैर्य न धारण करने पर शंकर जी ने देवर्षियों को कुमार को समझाने के लिए भेजा परनतु वे निराश हो लौट आए। इस पर पुत्र वियोग से व्याकुल पार्वती के अनुरोध पर पार्वती के साथ शिवजी स्वयं वहां गए। पंरतु वह अपने माता पिता का आगमन सुनकर क्रोच पर्वत को छोड़कर तीन योजन और दूर चले गये। परंतु वहां पुत्र के न मिलने पर वात्सल्य से व्याकुल शिव–पार्वती ने उसकी खोज में अन्य पर्वतों पर जाने से पहले उन्होनें वहां अपने ज्योति स्थापित कर दी। उसी दिन से मल्लिकार्जुन क्षेत्र के नाम से वह ज्योतिर्लिंग मल्लिकार्जुन कहलाया। अमावस्या के दिन शिवजी और पूर्णिमा के दिन पार्वती जी आज भी वहां आते रहते है। इस ज्योतिर्लिंग के दर्शन से धन–धान्य की वृद्धि के साथ; प्रतिष्ठा आरोग्य और अन्य मनोरथों की भी प्राप्ति होती है।

प्राचीन काल में एक बार अर्जुन तीर्थयात्रा करते करते इस कदली वन में आया। उसकी धनुर्विद्या की परीक्षा लेने के लिए भगवान शंकर ने भील का रूप धारण किया और जंगली सुअर का शिकार करने के लिए पीछे दौड़ पडे । उसी वक्त अर्जुन भी पीछा कर रहा था। दोनों के बाण सुअर को लगे सुअर पर दोनो अपना अधिकार जमाने लगे इस युद्ध में अर्जुन विजयी हुये। शंकर प्रकट हुये व प्रसन्न होकर कितार्जुन युद्ध से प्रसिद्ध है।

चंद्रावती नाम की एक राजकन्या वन–निवासी बनकर इस कदली वन में तप कर रही थी। एक दिन उसने एक चमत्कार देखा एक कपिला गाय बिल्व वृक्ष के नीचे खडी होकर अपने चारों स्तनों से दूध की धाराएँ जमीन पर गिरा रही है। गाय का यह नित्यक्रम था। चंद्रवती ने उस स्थान पर खोदा तो आश्चर्य से दंग रह गई। वहाँ एक स्वयंभू शिवलिंग दिखाई दिया। वह सूर्य जैसा प्रकाशमान दिखाई दिया, जिससे अग्निज्वालाएँ निकलती थी। भगवान शंकर के उस दिव्य ज्योतिर्लिंग की चंद्रावती ने आराधना की। उसने वहाँ अतिविशाल शिमंदिर का निर्माण किया। भगवान शंकर चंद्रावती पर प्रसन्न हुए। वायुयान में बैठकर वह कैलाश पहुंची। उसे मुक्ति किली। मंदिर की एक शिल्पपट्टी पर चंद्रावती की कथा खोदकर रखी है।

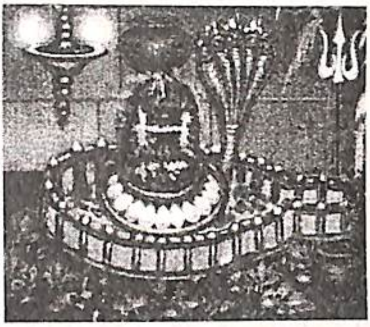
शैल मल्लिकार्जुन के इस पवित्र स्थान की तलहटी में कृष्णा नदी ने पाताल गंगा का रूप लिया है। लाखों भक्तगण यहाँ पवित्र स्नान करके ज्योतिर्लिंग–दर्शन के लिए जाते हैं

कर्नाटक – अभियान के समय छत्रपति शिवाजी महारात का ज्योतिर्लिंग का दर्शन करने आये थे, तब उन्होनें यहाँ मंदिर को दाहिनी और एक गोपुर का निर्माण किया और अन्नछत्र भी खोल दिया था।

विजयनगर के राजाओं ने भी यहाँ मंदिर, गोपुर, ओसारा, तालाब बाँधे। शिवभक्त अहिल्यादेवी होलकर ने यहाँ की पातालगंगा पर ८५२ सीढ़ियों का एक मजबूत घाट का निर्माण किया।

शैल पर्वत का यह प्रदेश पहले दुर्गम, कष्टपद्र तथा भयावना लगता था। फिर भी निष्ठा के बलपर हजारों भक्तगणों का यहाँ ताँता लगा रहता था। हिरण्यकश्यप, नारद, पांडव, श्रीराम आदि पुराण–प्रसिद्ध व्यक्तियों ने यहाँ आकर ज्योतिर्लिंग के दर्शन किए थे।

३. श्रीमहांकालेश्वर



गाँव के लिए मंदिर होता हैं लेकिन मंदिर के लिए गाँव होता है। या मंदिरों का ही गाँव होता है। यह बहुत कम सुनने का मिलता है। मध्यप्रदेश में क्षिप्रा नदी के किनारे उज्जैन नगर बसा हुआ है, जिस नगर को इंद्रपुरी–अमरावती या अवंतिका कहते है। यहाँ के सैकड़ों मंदिरों की स्वर्ण–चोटियों को देखकर इस नगर को 'स्वर्णशृंगा' भी कहते है।

मोक्षदायक, सप्तपुर में से एक इस अंवतिका नगर में ७ सागरतीर्थ, २८ तीर्थ, ८४ सिद्धलिंग, २५–३० शिवलिंग, अष्टभैव, एकादश रूद्रस्थान, सैकड़ो देवताओं के मंदिर, जलकुंड और स्मारक है। ऐसा महसूस होता है। कि ३३ करोड़ देवताओं की इंद्रपुरी इस उज्जैन में बसी हुई है। ॐ 25/10/5 (DSY)

अवन्तीवासी एक ब्राह्मण के शिवोपासक चार पुत्र थे। ब्रह्मा से वर प्राप्त दुष्ट दैत्यराज दूषण ने अवंती में आकर वहां के निवासी वेदज्ञ ब्राह्मण को बड़ा कष्ट दिया परन्तु शिवजी के ध्यान में लीन ब्राह्मण तनिक भी खिन्न नहीं हुए। दैत्यराज ने अपने चारों अनुचर दैत्यों को नगरी में घेर कर वैदिक धर्मानुष्ठान ने होने देने का आदेश दिया, दैत्यों के उत्पात से पीड़ित प्रजा ब्राह्मणों के पास आई। बाह्मण प्रजाजनों को धीरज बंधा कर शिवजी की पूजा में तत्पर हुए। इसी समय ज्योहिं दूषण दैत्य अपनी सेना सहित उन ब्राह्मणों पर झपटा, त्योहि पार्थिव मूर्ति के स्थान पर एक भयानक शब्द के साथ धरती फटी और वहां पर गड्ढा हो गया। उसी गर्त में शिवजी एक विराट रूपधारी महाकाल के रूप में प्रकट हुए। उन्होने उस दुष्ट को ब्राह्मणों के निकट न आने को कहा परन्तु उस दुष्ट दैत्य ने शिवजी की आज्ञा न मानी। फलतः शिवजी ने अपनी एक ही हुंकार से उस दैत्य को भस्म कर दिया। शिवजी को इस रूप में प्रकट हुआ देखकर ब्रह्मा, विष्णु तथा इन्द्रादि देवों ने आकर भगवान शंकर की स्तुति वन्दना की।

महाकालेश्वर की महिमा अवर्णनीय है। उज्जैयिनी नरेश चन्द्रसेन शास्त्रज्ञ होने के साथ साथ पक्का शिवभक्त भी था। उसके मित्र महेश्वरजी के गण मणिभद्र ने उसे एक सुन्दरचिंतामणि प्रदान की। चन्द्रसेन कण्ठ में धारण करता तो इतना अधिक तेजस्वी दीखता कि देवताओं को भी ईर्ष्या होती कुछ राजाओं के मांगने पर मणि देने से इन्कार करने पर उन्होंने चन्द्रसेन पर चढ़ाई कर दी। अपने को घिरा देख चंद्रसेन महाकाल की शरण में आ गया। भगवान शिव ने प्रसन्न होकर उसकी रक्षा का उपाय किया। संयोगवश अपने बालक को गोद में लिए हुए एक ब्राह्मणी भ्रमण करती हुए महाकाल के समीप पहुंची तो वह विधवा हो गई। अबोध बालक ने महाकालेश्वर मंदिर में राजा को शिव पूजन करते देखा तो उसके मन में भी भक्ति भाव उत्पन्न हुआ। उसने एक रमणीय पत्थर को लाकर अपने सूने घर में स्थापित किया और उसे शिवरूप मान उसकी पूजा करने लगा। भजन में लीन बालक को भोजन की सुधि ही न रही। उतः उसकी माता उसे बुलाने गई परन्तु माता के बार बार बुलाने पर भी बालक ध्यान मगन मौन बैठा रहा। इस पर उसकी माया विमोहित माता ने शिवलिंग को दूर फेंक कर उसकी पूजा नष्ट कर दी। माता के इस कृत्य पर दुःखी होकर वह शिवजी का स्मरण करने लगा। शिवजी की कृपा होते देर न लगी, गोपी पुत्र द्वारा पूजित पाषाण रत्नजड़ित ज्योतिर्लिंग के रूप में आविर्भूत हो गया। शिवजी की स्तुति वंदना के उपरांत जब बालक घर को गया तो उसने देखा कि उसकी कुटिया का स्थान सुविशाल भवन ने ले लिया है। इस प्रकार शिवजी की कृपा से वह बालक विपुल धन धान्य से सामृद्ध होकर सुखी जीवन बिताने लगा।

इधर विरोधी राजाओं ने जब चन्द्रसेन के नगर पर अभियान किया तो वे आपस में ही एक दूसरे से कहने लगे कि राजा चंद्रसेन तो शिवभक्त है और यह उज्जैयिनी महाकाल की नगरी हैं जिसे जीतना असम्भव है। यह विचार कर उन राजाओं ने चंद्रसेन से मित्रता कर ली और सबने मिलकर महाकाल की पूजा की।

इस समय वहां वानराधीश हनुमान जी प्रकट हुए और उन्होनें राजाओं को बताया कि शिवजी के बिना मनुष्यों को गति देने वाला अन्य कोई नहीं हैं शिवजी तो बिना मंत्रों से की गई पूजा से भी प्रसन्न हो जाते है। गोपीपुत्र का उदाहरण तुम्हारे सामने ही है। इसके पश्चात् हनुमान जी चंद्रसेन को स्नेह और कृपा पूर्ण दृष्टि से देखकर वहीं अन्तर्धान हो गए।

संस्कृत विद्या का आद्यपीठ और धर्म, ज्ञान तथा कला का त्रिवेणीसंगम यहाँ हुआ है। इस नगर का वैभव मौर्य, गुप्त और अन्य राजाओं ने बढ़ाया है। संवत्कर्ता विक्रमादित्य के साम्राज्य की उज्जैन राजधानी थी।

यहाँ राजा भर्तृहरि की विरह–कथा, नीतिशतक, प्रद्योत की राजकन्या वासवदत्ता और उदयन की प्रेम–कहानी, इस नगर का प्रकृति–सौदर्य आदि का सुन्दर वर्णन अनेक लेखको ने किया है। प्रभात के मंगलसमय पर नगर की स्त्रियाँ कुंकुममिश्रित पानी आंगन में छिडक–कर उसे रंगोली से सुशोभित किया करती थी।

क्षिप्रा नदी के किनारे उज्जैन में इस महाकाल शिव के मंदिर में प्रातः चार बजे पूजा होती है। अभिषेक के पश्चात् महाकाल को चिता–भस्म लगाया जाता है।

शास्त्र में चिताभस्म अशुद्ध माना गया है। चिताभस्म का स्पर्श हो तो स्नान करना पड़ता हैं परंतु महाकाल शिव के स्पर्श से भस्म पवित्र होता है। क्यों कि शिव निष्काम है। उन्हें काम का स्पर्श नहीं है। इसलिए शिवजी मंगलमय है।

शिवमहिम्नः स्तोत्र में वर्णन है।

चिताभस्मालेपः स्त्रगपि नृक रोटीपरिकरः,
अमंगल्यं शीलं तव भवतु नामैवमखिलं,
तथापि स्मतृ णां वरद परमं मंगलमसि।

इसप्रकार शिव मंगलमय सुंदर है। अवन्ती नगरी शिव की प्रिय नगरी है। महाकाल के जो दर्शन करते है। उसे स्वप्न में भी दुःख नहीं होता। मानव जिस जिस कामना से महाकाल के ज्योतिर्लिंग की उपासना करता है। उस उसके मनोरथों की सिद्धि मिलती है, मोक्ष की प्राप्ति होती है। 31/10, 7/12/215, 16/1/1, 8/3/1
19/4/1, 12/5/1, 8/6/1, 29/6/1, 23/7/1, 16/11/01 (M), 17/11/03
15/11/4

४. श्रीओंकारममलेश्वर



विंद्याचल पर्वत के परिसर में मध्यप्रदेश से भारत की ललाटरेख–लोकमाता नर्मदा नदी पश्चिमवाहिनी होकर बहती है। उसकी विपुल धीरगंभीर जलराशी भूतल के पाप–ताप–संकटों को दूर करती है। पहाड़ों से कलकल करती जानेवाली नर्मदा को 'रेवा' भी कहते हैं। उसकी धारा में चिकने गोल पत्थरों को बाणलिंग कहते है।

"नर्मदा के कंकर उत्तेशंकर" ऐसी भक्तगणों की श्रद्धा है। अतः नर्मदा को "शांकरी नदी" इस नाम से भी जाना जाता है।

नर्मदा के किनारे उसकी धारा में एक विशाल द्वीप पर भगवान श्रीशंकरजी के बारह ज्योतिर्लिंग में से चौथा ज्योतिर्लिंग 'ओंकारममलेश्वर' के नाम से प्रसिद्ध है। वहाँ के द्वीप को और धारा को 'ओऽम्' जैसा आकार प्राप्त हुआ है। जो प्राकृतिक ढंग से सजा हुआ है। नर्मदा की परिक्रमा करनेवाले यात्री इस ओंकार की परिक्रमा करने में अपने आपको कृतार्थ मानते हैं तथा ज्योतिर्लिंग के दर्शन से पावन हो जाते हैं। इस स्थान का नर्मदा–तट और ओंकार द्वीप का परिसर इतना सुंदर है। कि देखते ही बनता है। प्रकृति–सौंदर्य नयनाभिराम है। नर्मदा के तट की मजबूत हरी चट्टानों की सीढ़ीनुमा ढलानपर बसे घर, वहाँ के मंदिर, धारा में स्थित कोटितीर्थ, चक्रतीर्थ जैसी बड़ी खाईयाँ हैं। इन खाईयों में रहनेवाली महाकाय मछलियाँ और खूँखार मगरमच्छ दिखाई देते है। ओंकार द्वीप पर लताओं से लिपटे घने वृक्ष नजर आते हैं। वृक्षोंपर बंदरों की भीड़ रहती है। पंछी चहकते है। मंदिरों के शिखर चमकते रहते है। वातावरण में सदा गूँजते रहने वाला 'ओऽम नमः शिवाय' यह जयघोष! ऐसे स्थान पर भगवान शंकर ओंकारेश्वर और अमरेश्वर के नाम से ज्योतिर्लिंग के रूप में प्रकट हुए। कथा इस प्रकार है। ॐ 23/11/5

प्राचीन काल में दानवों ने देवों को पराजित किया था। इंद्रादि देव चिंतित हुए। दानवों ने त्रैलोक्य में ऊधम मचाया तब देवगणों को फिरसे बल प्राप्त हो इसके लिए महादेव ने दिव्य ज्योतिर्मय ओंकाररूप धारण किया। पाताल से निकलकर शंकर भगवान नर्मदा–तट पर लिंगरूप में प्रकट हुए। देवगणों ने लिंग की प्रतिष्ठापना से देवों को फिरसे बल प्राप्त हुआ। उन्होंने दानवों का नाश किया और स्वर्ग का खोया हुआ साम्राज्य फिर से प्राप्त किया। 24/11/03

ओंकार–अमरेश्वर ज्योतिर्लिंग के स्थानपर ब्रह्मा और विष्णु भगवान ने भी निवास किया। अतः नर्मदा तट ब्रह्मपुरी, विष्णुपुरी तथा रूद्रपुरी का त्रिपुरी क्षेत्र बन गया। रूद्रपुरी में अमरेश्वर ज्योतिर्लिंग है।

आगे चलकर पुराणकाल में इंद्र की कृपा से युवनाश्वपुत्र मांधाता यहाँ राज करता था उसने भगवान शंकर की परम सेवा की। उससे भगवान शंकर प्रसन्न हुए। ओंकार ज्योतिर्लिंग के जलहरी (अरघा) में से नर्मदा का पानी पहाड़ के नीचे से आकर अदृश्य रूप में आगे बहता जाता है। ओंकारेश्वर की लिंगमूर्ति के आसपास जलहरी के गहरे स्थान से होकर नर्मदा का पानी सदा बहता रहता है। जब इस पानी के पृष्ठभाग पर बुलबुलें निकलते है, तब भगवान शंकर प्रसननप हुए ऐसा माना जाता है। ॐ 29/11/4

मांधाता राजा ने इस पवित्र स्थान पर अपनी राजधानी बनाई। अतः इस तीर्थस्थान को ओंकार मांधाता नाम से जाना जाता है। मांधाता राजा की संतान आज भी यहाँ निवास करती है।

विंद्य पर्वत ने भी घोर तप करके ओंकार–अमरेश्वर को प्रसन्न कर लिया था।

फलस्वरूप विंद्य का यह स्थान सुंदर बन गया है। अगस्ति जैसे कई ऋषियों ने इस ओंकारम्–अमरेश्वरम् ज्योतिर्लिंग के स्थान पर तप–साधना की थी, अपने आश्रम स्थापित किए थे।

ऐतिहासिक समय में इस तीर्थस्थान का वैभव दुगुना हो गया था। १०६३ ई. में परमार राजा–उदयादित्य ने ममलेश्वर मंदिर में चार संस्कृत स्तोत्र शिलालेख के रूप में अंकित किए है। पुष्पदंत का "शिवमहिम्नस्तोत्र" का शिलालेख भी यहाँ देखने को मिलता है। 1/12/03

ओंकारेश्वर द्वीप पर पहले आदिवासी लोगों की बस्ती थी। वह स्थान कालिकादेवी का था। माता के भक्त जो भैरवगण कहलाते थे, यात्रियों को बहुत सताते थे; उनकी बलि चढ़ाते थे। आगे चलकर दरियाईनाथ नाम के सिद्ध पुरूष ने वहाँ अपना तख्त स्थापित करके उन भैरवगणों के अत्याचार को रोका। तब से यात्रियों का वहाँ आना–जाना शुरू हुआ।

उसके बाद वहाँ भीलों का शासन चलता रहा। ११६५ ई. में राजा भारतसिंह चौहान ने भीलों का राज्य जीतकर उस ओंकर मांधाता के वैभव को और बढ़ाया। भारतसिंह चौहान का राजमहल आज भी वहाँ खंडहर की अवस्था में दिखाई देता है। भारतसिंह चौहान के वारिस आज भी अपने आपको 'राजा' मानकर इस ओंकार द्वीप पर हक जमाये बैठे हैं।

पेशवा बाजीराव द्वितीय ने यहाँ के पुराने मंदिर का जीर्णोद्धार किया। पेशवा के बाद पुण्यश्लोक अहिल्यादेवी होलकरने इस पुराने तीर्थस्थान में कई सुधार किए। विशाल, मजबूत और सुंदर घाट बाँधें विशेष रूप में कोटिर्लिंगार्चना की रीत शुरू की।

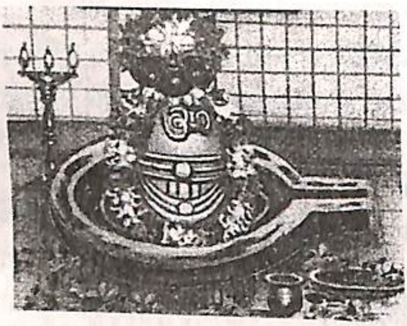
बाईस ब्राह्मण हाथ में तेरह सौ छेद वाला एक लकडी का तख्ता लेते है। उन छेदों में मिट्टी के शिवलिंग बनाकर उनकी पूजा की जाती हैं। पूजा के बाद नर्मदा की धारा में शिवलिंगों का विसर्जन किया जाता है। यह कार्य वर्षभर चलता रहता है। इसी विधि को कोटिर्लिंगार्चना कहते है।

ओंकारमांधाता का यह शिवतीर्थ अतिसुंदर है। इसके संबंध में शंकराचार्य अपने स्तोत्र में कहते है। ॐ 27/12/5(N)

कावेरिकानर्मदयोः पवित्रे समागमे सज्जनतारणाय।
सदैव मांधातृपुरे वसंत ओंकारमीशं शिवमेक मीड।।

(तात्पर्य – सज्जनों का उद्धार करनेवाले और कावेरी तथा नर्मदा के संगमस्थानपर हमेशा निवास करनेवाले ओंकार शिव को मेरा प्रणाम।)

५. श्रीवैद्यनाथ



"वैद्यनाथेश्वरं नाम्नातल्लिंग भवन्मुकेत।
प्रसिद्धं त्रिषु लोकेषुः भुक्तिमुक्तीप्रदं सताम्।।
ज्योतिर्लिंगमिदं श्रेष्ठं दर्शनात् पूजनादपि।
सर्व पावहारं दिव्यं भुक्तिवर्धनमुत्तमम।।
मानुषं दुर्लभं प्राण्य वैदद्यनाथस्य दर्शनम्।
न करोति नरो यस्तु जन्म निरर्थकम्।।"

कन्याकुमारी से उज्जैन के बीच अगर एक मध्य रेखा खीचीं जाय तो उस रेखा पर परली गाँव आपको दिखाई देगा। यह गाँव मेरू पर्वत अथवा नागनारायण पहाड़ की एक ढलान पर बसा है। बह्मा, वेणू और सरस्वती इन तीन नदियों के आसपास बसा परली एक प्राचीन गाँव है। शंकरजी के बारह ज्योतिर्लिंग में से एक पवित्र स्थान के रूप में होने–से इस स्थान का महत्त्व और बढ़ गया है।

इस गाँव को कांतीपुर, मध्यरेखा, वैजयंती अथवा जयंती क्षेत्र इन नामों से भी जाना जाता है। यहाँ शंकरभगवान पार्वती के साथ निवास करते है। यह दोनों का एक साथ रहना केवल परली में दिखाई देता है। अन्यत्र ऐसी बात कहीं नहीं दिखाई देती। अतः इस स्थान को 'अनोखी काशी' कहते है। इसे काशी जैसा महत्त्व होने के कारण यहाँ के लोगों को 'काशी' की तीर्थयात्रा करने की आवश्यकता नहीं पडती।

बीड जिले में आंबेजोगाई से केवल २६ कि० मी० पर यह स्थान है। आंबेजोगाई की योगेश्वरी का विवाह परली के वैद्यनाथ से तय हुआ था; परन्तु बारातीयों के वहाँ पहुँचने तक विवाह का मुहूर्त टल गया। परिणाम यह हुआ कि बाराती निवासस्थान पर ही पत्थर के बुत बन गए। उधर योगेश्वरी परली से दूर बैठी रही। इस प्रकार की एक कथा यहाँ सुनने को मिलती है।

भरपूर पानी, उत्तम हवा और यातायात की सुव्यवस्था के कारण परली गाँव व्यापार में अग्रणी माना जाता है। विद्युत–निर्माण का वहुत बड़ा थर्मल–स्टेशन इस गाँव में है।

परली गाँव छोटा होते हुए भी उसे तहसील और जिले जैसा महत्त्व प्राप्त हुआ। गाँव के आसपास का प्रदेश पुराणकालीन घटनाओं का साक्षी है। अतः इस गाँव को विशेष महत्त्व प्राप्त हुआ है।

देव–दानवों द्वारा किए गए अमृत–मंथन से चौदह रत्न निकले थे। उनमें धन्वंतरी और अमृत रत्न थे। अमृत को प्राप्त करने दानव दौड़े तब श्रीविष्णु ने अमृत के साथ धन्वंतरी को शंकर भगवान की लिंगमूर्ति में छिपाया था। दानवों ने जैसे ही लिंगमूर्ति को छूने की कोशिश की वैसे ही लिंगमूर्ति से ज्वालाएँ निकली, दानव भाग गये। लेकिन शंकरभक्तों ने जब लिंगमूर्ति को छूआ तब उसमें से अमृत धाराएँ निकली। आज भी इस ज्योतिर्लिंग को स्पर्श करके दर्शन लेने की पद्धति है। जाति–भेद, लिंगभेद आदि किसी भी तरह का भेदभाव यहाँ नहीं होता। कोई भी यहाँ आकर शंकरभगवान का दर्शन पाकर पावन हो जाता है। लिंगमूर्ति में धन्वंतरी और अमृत रहने के कारण उसे अमृतेश्वर तथा धन्वंतरी ऐसा भी कहते हैं।

"वैद्याभ्यां पूजितं सत्यं, लिंगमेतत् पुरातमम्।
वैद्यनाथमिति प्रख्यातं, सर्वकामप्रदायकम्।।"

परली गाँव के पहाड़ों में, नदियों की घाटियों में उपयुक्त वनौषधियाँ मिलती है। अतः परली के ज्योतिर्लिंग को वैद्यनाथ इस नाम से भी जाना जाता है।

भगवान विष्णु ने देवगण को यहाँ अमृतविजय प्राप्त करा दिया था। अतः इस तीर्थस्थान को 'वैजयंती' यह नाम प्राप्त हुआ है।

एक बार राक्षसपति रावण ने कैलाश पर्वत पर जाकर शिवजी को प्रसन्न करने के लिए घोर तप किया। शीत–ताप–वर्षा–अग्नि के कष्ट सहन करने पर भी जब शिवजी प्रसन्न न हुए तो रावण ने अपने सिर काट–काट कर शिवलिंग पर चढ़ाने आरम्भ कर दिए नौ सिर चढ़ा चुकने पर जब दंसवा सिर चढ़ाने को काटने लगा तो शिवजी प्रकट हो गये और उसके सिर को पूर्ववत् करके उससे वर मांगने को कहने लगे। इस पर रावण ने कहा कि मै आपको अपनी लंका में ले जाना चाहता

हूँ। भक्त वत्सल शंकर ने उद्विग होने पर भी भक्त की इच्छा को स्वीकार कर लिया। उन्होंने कहा कि तुम मेरे लिंग को भक्ति सहित अपने घर को ले जाओ पर ध्यान रखना कि यदि तुम कहीं बीच में इस लिंग को धरती पर रख दोगे तो यह वहीं स्थिर हो जाएगा।

रावण शिवलिंग को लेकर अपने घर चला तो मार्ग में उसे लधुशंका लगी। उसने एक गोप को लिंग थमाया और स्वयं लघुशंका करने चल दिया। गोप लिंग के भार को सम्भाल न सका और उसने उसे धरती पर रख दिया। बस शिवजी वहीं स्थिर हो गए और उनका नाम बैद्यनाथेश्वर पड़ा।

दुष्टात्मा रावण के पास शिवजी के निवास के समाचार से देवताओं को दुःख हुआ। उनके अनुरोध से नारदजी रावण के पास जाकर उसके तप की प्रशंसा करते हुए बोले – तुमने शिवजी पर विश्वास करके भारी भूल की है। शिवजी के वचन को सत्य मानना गलत है। तुम उनके पास जाकर उनका अहित करके अपना कार्य सिद्धि करो। तुम वहाँ जाकर कैलाश को उखाड़ डालों। उसको उखाडने की सफलता ही तुम्हारी लक्ष्य – सिद्धि की सूचक होगी। नारदजी की बातों में आकर रावण ने वैसा ही किया, जिससे रूष्ट होकर शिवजी ने रावण को शाप दे दिया कि तेरी भुजाओं के अंहकार का दमन करंने वाली शक्ति शीघ्र ही आविर्भूत होगी नारदजी ने अपनी सफलता की सूचना देकर देवों को निश्चिन्त और प्रसन्न किया। इधर रावण प्रसन्न होकर घर आया और शिवजी की माया से विमोहित उस दुष्ट ने सारे जगत को अपने आधीन करने का निश्चय कर लिया। उसके दम्भ के विनाश के लिए ही भगवान को राम अवतार धारण करना पड़ा।

परली गाँव के पास ऊँचें स्थानपर पत्थरों से बना भव्य मंदिर है। मंदिर के चारों ओर मजबूत दीवार है। आंतरिक भाग में बरामदे और बड़ा आंगन है। मंदिर के बाहर ऊँचा दीपस्तंभ है। महाद्वार के पास एक मीनार है। उसे प्राची या गवाक्ष कहते हैं। इनकी दिशासाधना के कारण मंदिर में चैत्र और आश्विन महिनों में विशेष दिन को सूर्योदय के समय सूर्यकिरणें वैजनाथ के लिंगमूर्ति पर सीधे गिरती है।

मंदिर में जाने के लिए मजबूत और बड़ी सीढियाँ है। उन्हें घाट कहते है। पुराना घाट शनः ११०८ में बाँधा है।

मंदिर में भगवान का गर्भगृह और सभागृह दोनों का स्तर समान होने के कारण सभागृह से ही भगवान के दर्शन होते है। और जगह इस तरह का प्रबंध नहीं है। अन्यत्र भगवान का गर्भगृह गहरा है।

वैद्यनाथ की लिंगमूर्ति शालिग्राम–शिला से बनी है। वह बहुत मुलायम, भव्य और प्रसन्न दिखाई देती है। मंदिर के गर्भगृह के चारों ओर नंदादीप जलते रहते है।

भगवान वैद्यनाथ के मंदिर का जीर्णोद्धार शक् १७०६ में शिवभक्त सति अहिल्यादेवी होलकर ने परली के पास त्रिशुलादेवी–पहाड़ के विशेष पत्थर लाकर किया था। अहिल्यादेवी का यह तीर्थस्थान बहुत प्रिय लगता था।

मंदिर का भव्य सभामंडप स्वर्गीय रामराव नाना देशपांडे ने गाँव के कारीगर तथा भक्तगणों की सहायता से बाँधा था। उनकी स्मृति के रूप में वैद्यनाथ मंदिर के पास एक रामराजेश्वर महादेव का मंदिर बनाया है। वैद्यनाथ मंदिर के अहाते में ही शंकरजी के और ग्यारह मंदिर है। वीरशैव लिंगायत लोगों का वैद्यनाथ का तीर्थक्षेत्र एक श्रेष्ठ स्थान माना गया है।

श्रीमंत पेशवा ने इस देवस्थान की व्यवस्था के लिए बड़ी जमीन-जागीर के रूप में प्रदान की थी। आज यह व्यवस्था एक समिति के द्वारा की जाती है। यहाँ कई मंगलकार्य आयोजित किए जाते है। तथा सैर के लिए आये हुए लोग यहाँ निवास करते है। ॐ 24/1/15(M)

परली जिस प्रकार शिवभक्ति का स्थान है, उसी प्रकार हरिहर–मिलन का भी स्थान है। इस संयुक्त पुण्यमय भूमि में शंकरभगवान के साथ कृष्णभगवान का भी उत्सव बड़ी धूमधाम से मनाया जाता है। यहाँ के हरिहर तीर्थ का पानी वैद्यनाथ की दैनिक पूजा के लिए लाया जाता है। प्रति सोमवार को यहाँ भक्तगणों की भीड़ लगी रहती है।

चैत्र पडवा, विजयादशमी, त्रिपुरी पौर्णिमा, महाशिवरात्रि तथा बैकुंठ चतुर्दशी के दिन यहाँ बडे उत्सव आयोजित किए जाते है। इन उत्सवों में बेल और तुलसी में कोई भेद नहीं रहता। महादेवजी को तुलसी और विष्णुजी को बेल अर्पित करने की अनोखी रीत केवल वैद्यनाथ में ही दिखाई देती है। सावान के महीने में होनेवाली वैद्यनाथ की पूजा रूद्राभिषेक मंत्रोच्चार से परली का परिसर गूँज उठता है। नित्य की पूजा भी बडी श्रद्धा और निष्ठा से की जाती है 16/12/01 (M)

इस परली के तीर्थस्थान में कई साल पहले मार्कंडेय को शिवकृपा से जीवनदान मिला था। मार्कंडेय की अल्प आयु को यमराज की पकड़ से शिवजी ने मुक्त किया था। उसकी स्मृति में यहाँ मार्कंडेय के नाम का एक तालाब बनाया गया है। ॐ 7/2/15(M)

सत्यवान–सावित्री की कथा की यह पुण्यभूमि है। नारायण की पहाड़ी में सावित्री की कथा का वटवृक्ष आज भी वहाँ खड़ा है। वहाँ एक वटेश्वर का मंदिर भी है।

राजा श्रीयाल और रानी चांगुणा का प्रिय चिलिया बालक शिवकृपा से फिरसे जीवित हुआ, वह स्थान परलीवैजनाथ ही है। विख्यात संत जगत्–मित्र

नागाजी का निवास–स्थान परली था। उनकी समाधी और आश्रम यहाँ है।

जगमित्र नागाजी की जीवनी महिपतबुआ ताहराबादकर ने अपनी पद्य–रचना में जिसे 'भक्ति–विजय' ग्रंथ से जाना जाता है; उस में लिखी है। नागाजी परली के विठ्ठलभक्त ब्राह्मण थे। वे भिक्षा माँगकर अपने परिवार का पालनपोषण करते थे। दिनरात उनका ध्यान विठ्ठलभक्ति में लगा रहता था। एक रात उनके निंदकों ने उनकी झोपडी को आग लगा दी, परंतु विठ्ठल की कृपा से वे आग से सुरक्षित रूप में बच निकले। गाँववालों ने बाद में नागाजी को कुछ जमीन जागीर के रूप में प्रदान की। इसी जमीन में मेहनत से अनाज उगाकर वे अपने परिवार का पालनपोषण करते थे। दुष्ट लोग अब भी सतुष्ट नहीं थे। एक यवन अधिकारी परली में तबादला होकर आया था। निंदको ने यवन के कानों में कुछ कहा। यवन अधिकारी के मन में गलतफहमी निर्माण हुई उसने जगमित्र नागा की जमीन छीन ली और कहा, "तू अगर जगमित्र है तो मेरी व्यक्तिगत पूजापाठ के लिए जिन्दा शेर लाकर दिखा दें। जगमित्र नागाजी वन में गए। वहाँ उन्होंने विठ्ठल जी की आराधना की। उनकी प्रार्थना सुनकर विठ्ठलजी प्रसन्न हुए और शेर बनकर नागाजी के सामने खड़े हो गये। नागाजी को अति आनंद हुआ। वे शेर को लेकर यवन अधिकारी के घर गए। साक्षात् शेर को देखकर यवन अधिकारी लज्जित हुआ। उसने नागाजी से क्षमा माँग कर उनकी जमीन उन्हें वापस की। संतश्रेष्ठ नागाजी की समाधी परली–वैजनाथ में है।

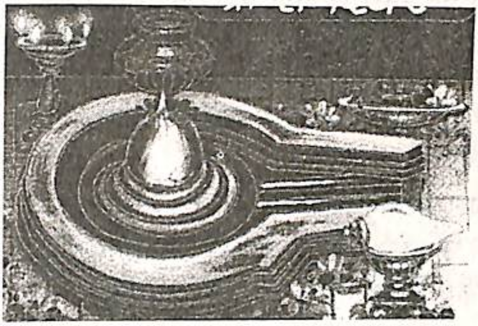
परली में अनके मंदिर, आश्रम, समाधी, तीर्थ और पवित्र स्थान है। उनकी कथाएँ भी कई है। उनमें से काले–साँवले–गोरे राम के मंदिर, झिंगुरवाले गोपीनाथ, दत्त, कालिका, शनि, विठ्ठल, व्यंकटेश, बालाजी इस प्रकार मंदिरों के कुछ नाम हैं

बिना सूँड के गणेशजी जो पहलवान के आसन–समान बैठे है, सबसे पहले उनका दर्शन लेने के बाद ही वैद्यनाथ का दर्शन लेना पड़ता है।

वक्रेबुआ, धुंडिराज महाराज, यमराज, विश्वेश्वर, गुरूलिंगस्वामी आदि अनेक महापुरूषों ने यहाँ निवास किया हैं उनके पावन स्पर्श से परली की भूमि पुण्यभूमि सिद्ध हुई है। महाराष्ट्र के लिए यह एक गर्व की बात है।

जय वैद्यनाथ! जय वैद्यनाथ! जय वैद्यनाथ!

६. श्रीभीमाशंकर



"पञ्जरा भीमरथ्याच कृष्णा वेणी बृहन्नदी।
मलापहारिणी यत्र स .ता लोकविश्रुता।।"

– सोमेश्वर देव

"भीमा बनी चंद्रभागा
विठ्ठल चरण की गंगा"

चंद्रभागा (भीमा नदी) नदी के किनारे बालू के विशाल मैदान में लाखों भक्त (वारकरी) गण तल्लीन होकर नाचते दिखाई देते है। पंढरपुर का यह दृश्य हमें हमेशा देखने को मिलता है। भीमामैया को गंगा–भागीरथी मानकर उसमें स्नान करते है। पंढरपुर में भीमा पदी का नाम चंद्रभागा हुआ है, क्यों कि पंढरपुर के पास भीमा चंद्रकोर की तरह मोड लेती हैं

गंगामैया शंकरजी की जटा से निकलकर स्वर्ग से सीधे निकलकर पृथ्वी पर प्रकट हुई, और भीमामैया शंकरजी के पसीने के रूप में प्रकट हुई। भीमा नदी का उत्पत्तिस्थान श्रीभीमाशंकर है, जो बारह ज्योतिर्लिंग मे से एक है। पुणे जिले में राजगुरूनगर (खेड) के तहसील में घोडेगाव के आगे सह्यद्रि पर्वत की भवरगिरी, रथाचल और भीमाशंकर की पहाडियाँ है। उनमें से भीमाशंकर की पहाडी पर भीमाशंकर का पवित्र स्थान है। यह हवा खाने का स्थान होते हुए भी यहाँ शीत हवा की चुभन महसूस नहीं होती।

यहाँ के घने जंगल में शेर दिखाई देते है। अन्य जंगली प्राणी भी है। यहाँ वनऔषधियों का भंडार है। भीमाशंकर की तीर्थयात्रा करना अब आसान हो गया है। तीर्थस्थान तक पहुँचने के लिए सीधे और सुगम सडकें बनायी गई है। केवल कोकण प्रदेश से यहाँ आना पहाड़ी मार्ग के कारण कठिन हो जाता है।

बहुत साल पहले यहाँ के वन शाकिनी और डाकिनी के निवासस्थान थे। इस प्रदेश में बस्तियां कम और विरल है; परन्तु शिवरात्रि के पर्व में लोगों की भीड़ लगी रहने के कारण यह प्रदेश जगमगा उठता है। और समय पर भक्तगण आते है। और श्रीभीमाशंकर का दर्शन पाकर चले जाते है। आजकल इस पवित्र स्थान पर बहुत सुधार किए गए है। शासन का एक विश्रामधाम भी यहाँ है। कहते है जंगल के शेर हर रात को ज्योतिर्लिंग का दर्शन पाकर चले जाते है। ज्योतिर्लिंग के संबंध में कुछ कथाएँ इस प्रकार है–

प्राचीन काल में त्रिपुरासुर नाम का राक्षस बडा उन्मत्त हो गया था। स्वर्ग, मृत्यु और पाताल में उसने ऊधम मचाया था। सभी देवगण घबडा गये। अन्त में खुद महादेव त्रिपुरासुर का वध करने निकले। भगवान शंकर ने विशाल भीमकाय शरीर धारण किया। उनका रूद्रावतार देखकर त्रिपुरासुर भयभीत हुआ। दोनों में कई दिनों तक युद्ध चलता रहा। आखिर में शंकरभगवान नें उस दुष्ट का वध किया और त्रिभुवन पर आए संकट को दूर किया। उस समय भीमकाय महादेवजी को बहुत थकान महसूस हुई। वे विश्राम के हेतु सह्ययाद्रि के इस ऊँचे स्थान पर विराजमान हुए। उनके शरीर से पसीने की सहस्र धाराएँ निकली और उन धाराओं का एक प्रवाह निकला जो कुंड में जमा हुआ। वहाँ से जिस नदी का उद्‌गम हुआ उसका नाम भीमा हे। आज भी भीमा का उद्‌गम–स्थान देखने को मिलता है। भक्तगणों ने उस भीमकाय रूद्र की प्रार्थना की– "संत–सज्जनों की रक्षा करने के लिए आप यहाँ स्थायी निवास कीजिए।" भोलेनाथ ने भक्तों का कहना माना और ज्योतिर्लिंग के रूप में यहाँ सदा के लिए बस गए। (2)1।4(m), ॐ 9/515

कुम्भकर्ण और कर्कटी से उत्पन्न भीम नाम एक का एक बड़ा ही वीर राक्षस था, जो सब प्राणियों को दुःख देनेवाला और धर्म का नाश करने वाला था। उसने अपनी माँ से जब अपने पिता और निवास आदि से सम्बन्ध में पूछा तो उसने बताया कि तेरा पिता लंका पति रावण का भाई कुम्भकर्ण था, जिसे रामचन्द्र जी ने मार डाला। मैंने अभी तक लंका नहीं देखी तेरा पिता मुझे वहीं पर्वत पर मिला था और उसके द्वारा मैं तुझे उत्पन्न करके यहीं रह गई। मेरे पति के मारे जाने पर तो मायका ही मेरा एकमात्र सहारा रह गया। मेरे माता पिता पुष्कसी और कर्कट– जब अगस्त्य ऋषि को खाने को गए तो उसने अपने तप के तीव्र प्रभाव से उन्हें भस्म कर दिया।

यह सब सुनकर वह हरि समेत देवताओं से बदला लेने को आतुर हो उठा। उसने कठोर तप का आश्रय लिया और ब्रह्माजी को प्रसन्न कर अपार बलशाली होने का वर प्राप्त कर लिया। इस बल से उसने इन्द्र विष्णु समेत सभी देवताओं को जीतकर अपने अधीन कर लिया। इसके उपरान्त उसने शिवजी के महान भक्त

कामरूपेश्वर का सर्वस्व हरण करके उसे जेल में डाल दिया। कामरूपेश्वर जेल में भी विधिपूर्वक और नियमित रूप से शिव पूजन करता रहा और उनकी पत्नी भी शिवाराधना में निरत रही।

इधर ब्रह्मा विष्णु आदि देवताओं को साथ लेकर भगवान शंकर की सेवा में उपस्थित होकर उस दुष्ट दैत्य से परित्राण के लिए प्रार्थना करने लगे। शिवजी ने देवों को आश्वासन देकर उन्हें विदा दिया। 5/11, 23/1/1, 13/3/1

भीम को किसी ने कह दिया कि कामरूपेश्वर तो उसको मारने का अनुष्ठान कर रहा है। इस पर वह जेल में राजा के पास पहुँच कर उससे उनकी पूजादि से सम्बन्ध में पूछने लगा। राजा सत्य वचनों पर वह दुष्ट शिवजी की बहुत प्रकार से अवज्ञा करके उससे शिवजी के स्थान पर स्वयं भीम को पूजने को कहने लगा। कामरूपेश्वर के प्रतिरोध करने पर भीम ने तलवार से पार्थिव लिंग पर प्रहार किया। उसका खड्ग वहाँ तक पहुँचा भी नहीं था कि शिवजी वहाँ प्रकट हो गए। फिर धनुष, बाण, तलवार, परशु, परिधि और त्रिशुल आदि से दोनों में भयंकर युद्ध हुआ अन्ततः वहां आए नारद जी के अनुरोध पर शिवजी ने फूंक मारकर उस दुष्ट भीम को भस्म कर दिया और इस प्रकार देवों को कष्ट विमुक्त किया। इसके पश्चात् वहां उपस्थित देवताओं और मुनियो ने शिवजी से वहा पर निवास करने की प्रार्थना की और शिवजी लोककल्याण की दृष्टि से वहाँ भीम शंकर नामक ज्योतिर्लिंग के रूप में उपस्थित हुए। ॐ।।ऽ।ऽ

स्वयंभू महादेवः रथ–आकार की इस पहाडी में रहते है जिसे रथाचल नाम से जाना जाता है। यहाँ कोई एक भतीराव लकडहारा रहता था। एक बार वह लकडी काट रहा था। उसने जैसे ही पेड़ की जड पर कुल्हाडी मारी, जमीन में से खून के फव्वारे निकलने लगे। भतीराव घबडा कर भाग उठा। लोग वहाँ जमा हुए। किसी ने वहाँ एक दुधारू गाय को लाकर खडा किया। उसके स्तन से निकली दुग्ध–धाराओं के कारण खून की धाराओं का निकलना बंद हुआ। आश्चर्य की बात यह कि जहाँ जमीन में से शंकरजी का दिव्य ज्योतिर्लिंग प्रकट हुआ। लोगों ने वहाँ मंदिर–निर्माण करके उसमें ज्योतिर्लिंग की प्राणप्रतिष्ठा की। इस मंदिर को आगे चलकर भीमाशंकर के नाम से जाना जाने लगा।

शिवलीलामृत, गुरूचरित्र, स्तोत्ररत्नाकर आदि धार्मिक ग्रंथों में भीमाशंकर की महिमा का वर्णन किया हुआ हैं। गंगाधर पंडित, रामदास, श्रीधर स्वामी, नरहरिमालो, ज्ञानेश्वर आदि संत–महात्माओं ने भीमाशंकर के ज्योतिर्लिंग का गौरव किया है।

छत्रपति शिवाजी महाराज और राजाराम महाराज श्रीभीमाशंकर के दर्शन हेतु यहाँ आया करते थे। पेशवा बालाजी विश्वनाथ और रघुनाथजी का यह अपना मनपंसद स्थान था रधुनाथ पेशवा ने यहाँ एक कुआँ खोदा था। पेशवाओं के दीवान नाना फडणवीस ने इस मंदिर का जीर्णोद्धारा किया था। पुणे के साहुकार चिमणाजी अंताजी नाईक–भिडें ने १४३७ ई. में इस मंदिर के लिए सभा मंडप का निर्माण किया।

भीमाशंकर का मंदिर हेमाडपंथी पद्धति से बाँधा है। मंदिर को दशावतार की मूर्तियों से सजाया है।,जो बहुत सुंदर दिखाई देती हैं मुख्य मंदिर के पास ही नंदी का मंदिर है। मंदिर के पास लगभग ५ मन वजन का प्रचंड घण्टा है जिस पर १७२१ ई. में साल खोदा गया है। इस के नाद से मंदिर का सारा परिसर गूँज उठता है।

भीमाशंकर की पूजा हररोज रूद्राभिषेक, पंचामृतस्नान विधि से होती है। पूजा का साहित्य कीमती होता है। सोमवार तथा अन्य दिनों भक्तगण यहाँ दर्शन के लिए आते रहते है। महाशिवरात्रि को यहाँ बहुत बडा मेला लगता है। इस तीर्थस्थान का प्रकृति–सौंदर्य नयनाभिराम है।

भीमाशंकर–मंदिर के आसपास कई दर्शनीय स्थान है। उनसे संबंधित कुछ कथाएँ भी सुनने को मिलती है। उनमें से मोक्षकुडं, ज्ञानकुंड, गुप्तभीमेश्वर, सर्वतीर्थ, पापनाशिनी, आख्यातीर्थ, व्याघ्रपादतीर्थ, साक्षी विनायक, गोरखनाथ का आश्रम, दैत्यसंहारिणी कमलजादेवी का स्थान, कमलजा तालाब, हनुमान तालाब आदि स्थान दर्शनीयं है। यहाँ की कोकण कगार या नागफन का स्थान बड़ा भयावह है। लगभग तीन हजार फुट ऊँचाईवाले इस स्थान से तलहटी का कोकण–प्रदेश दिखाई देता है। ऐसा लगता है कि यह दृश्य हम वायुयान से देख रहे है। इस दृश्य को 'कोकण कगार' से खड़े–खड़े देखना मुश्किल है। कगार की जमीनपर लेटकर देखना पडता है। लेटे हुए आदमी के पैर पकड कर रखने पडते है। प्रकृति का यह भयावह लेकिन नयनाभिराम दृश्यको देखते समय 'जय भीमाशंकर! जय भीमाशंकर!' का घोष लगाना पड़ता है।

७. श्रीरामेश्वर

27/12/00



"सुताम्रपर्णीजलराशियोगे निबध्यसेतुं विशिखैर संख्यैः।
श्रीरामचंद्रेण समर्पित तं रामेश्वराख्यं नियतं नमामि।।"

काशी का गंगाजल रामेश्वर को ले जाना, यह चारो धाम की यात्रा का बड़ा पुण्यकर्म माना जाता है। काशी के बिंदुमाधव के पास गंगास्नान कर के वहाँ का पवित्र जल रामेश्वर को अर्पित किया जाता हैं और रामेश्वर के धनुष्यकोटी सेतुमाधव में स्नान करके वहाँ की थोडी बालू लेकर उसे प्रयाग (इलाहाबाद) के वेणीमाधव के पास त्रिवेणी संगम में समर्पित किया जाता है। फिर त्रिवेणी–संगम का गंगाजल घर लाया जाता है। कहते है कि ऐसा करने पर ही चारों धाम की यात्रा सफल होती हैं

भारत के दक्षिणी छोर पर दक्षिण–पूर्व के कोने में रामेश्वर का स्मुद्र–तीर्थ है। ज्योतिर्लिंग के रूप में यह तीर्थस्थान चारों धाम में एक पवित्र स्थान है।

स्कंध–पुराण, शिवपुराण आदि ग्रंथों में रामेश्वर का महत्त्व स्पष्ट किया है। श्री रामेश्वर की कथा इस प्रकार है

सीता की खोज में भटकते रामजी की सुग्रीव से मित्रता हुई और उसके विशेष दूत श्री हनुमान जी की सहायता से सीता का पता चला। तब श्री राम रावण अभियान करने के उद्देश्य से वानर सेना को संगठित कर दक्षिण के समुद्र तट पर पहुंचे और उसे पार करने की चिन्ता करने लगे । शिव भक्त राम जी को चिन्तित देख लक्ष्मण तथा सुग्रीवादि ने समझाया परन्तु शिवजी द्वारा प्राप्त बल वाले रावण के सम्बन्ध में वे निश्चिन्त न हुए। इस बीच उन्हें प्यास लगी और उन्होंने जल मांगा परन्तु ज्योही वे जल पीने लगे त्योंही उन्हें शिव पूजन करने की स्मृति जाग उठी और उन्होंने पार्थिव लिंग बनाकर षोडशोपचार से विधिवत शिवजी की आराधना की।

रामजी ने बड़ी ही आर्त्तवाणी से श्रद्धापूर्वक शिवजी से प्रार्थना की और उनका उच्च स्वर से जय –जयकार करते हुए नृत्य तथा गल्लनाद (मुंह से आगड बम–बम शब्द निकालना) किया तो शिवजी प्रसन्न हो राम जी के समक्ष प्रकट हो गए और उनसे वर मांगने को कहने लगे। राम ने प्रकट हुए महेश्वर की बहुत ही प्रेमपूर्वक अर्चना–वन्दना की और उनसे कहा कि यदि आप मुझ पर प्रसन्न है तो आप संसार को पवित्र करने और दूसरों के उपकार के लिए आप यहाँ निवास कीजिए। शिवजी ने 'एवमस्तु' कहकर रामेश्वर नाम से अपनी स्थिति की और शिवलिंग होकर रामेश्वर नाम से पश्थ्वी पर प्रसिद्ध हुए।

शिवजी की कृपा से ही राम जी रावण आदि राक्षसों को मारकर विजयी हुए। रामेश्वर महादेव का जो व्यक्ति दर्शन पूजन करता है, रामेश्वर शिवलिंग पर दिव्य गंगाजल चढ़ाता है वह जीवन मुक्त हो जाता है तथा अन्त में कैवल्य मोक्ष प्राप्त करता है।

जहाँ ज्योतिर्लिंग है वहाँ विशाल और सुंदर मंदिर का निर्माण किया गया है। यह मंदिर वास्तुशिल्प के संबंध में विश्व का एक श्रेष्ठ नमूना है। तमिलनाडू राज्य के रामनाड जिले में बालू के एक विशाल द्वीप पर यह मंदिर बाँधा है, जो दर्शनीय और दिव्य साक्षात्कारी है। श्रीरामेश्वर के इस भव्य–दिव्य मंदिर के प्रवेशद्वार पर दस मंजिलों वाला गोपुर है। उसका बाँधकाम, नक्काशी, मूर्ति और चोटियाँ देखकर सब लोग दंग रह जाते है। भगवान के विराट रूप का अनुभव यहाँ होता है। भक्तगणों का संकुचित मन यहाँ अपने आप विशाल बन जाता है।

मंदिर के ऊँचे शिलास्तंम्भों पर सुंदर–सुंदर चित्र खुदवाए गए है। सूँड को ऊँचा उठाये पत्थर के हाथी दिखायी देते है। मंदिर के चारों और पत्थरों से बनी भारी और मजबूत दीवार बाँधी है। उसकी चौडाई ६५० फीट और ऊँचाई १२५ फीट है। बालू के द्वीप पर बनाये गये इस भव्य मंदिर की कारीगरी देखकर भक्तगण प्रभावित हो जाते है।

एक सुवर्णमंडित स्तंभ के पास १३ फीट ऊँचाई का और ६ फीट चौडाई का तथा अंखड पत्थर में खोदा हुआ नंदी दिखाई देता है। यह नंदी मूर्तिकला का उत्कृष्ट नमूना है।

श्रीरामेश्वर के मुख्य मंदिर के पास ही पार्वती–पर्वतवर्धिनी का पश्थक मंदिर हे। इसके अलावा संतान गणपति, वीरभ्रद हनुमान, नवग्रह, अम्मनदेवी आदि अनेक मंदिर इस द्वीप पर है। प्रमुख मंदिर से लगभग २ किलोमीटर अंतरपर गंधमाधन पर्वत–टीला है।, वहाँ पहले किसी ने किला बाँधा था। रामखाई, रामझरोखा विभीषण का मंदिर आदि स्थान यहाँ दर्शनीय है। बालूकामय स्थान होते हुए भी यहाँ बाग–बगीचे का सौंदर्य खिल उठता है। रामेश्वर का यह नंदनवन है।

इस द्वीप रामतीर्थ, सीताकुंड, जटातीर्थ, लक्षणतीर्थ कपितीर्थ, ब्रह्मकुंड, विप्लुनीतीर्थ, गालवतीर्थ, मंगलतीर्थ, कोदंडरामतीर्थ, पांडवतीर्थ आदि २४ तीर्थ है। सभी तीर्थो का जल मधुर हैं हर तीर्थ के जल का अपना एक अलग स्वाद है। हर तीर्थ की अपनी एक कहानी हे। इन सभी तीर्थों में भक्तगण स्नान करते हैं स्नान से उनका तन और मन निर्मल होता है।

श्रीरामेश्वर मंदिर की पूरी व्यवस्था भारत सरकार के अधीन है। मंदिर की व्यवस्था और देखभाल व्यवस्थित ढंग से की जाती है। इस क्षेत्र में भीख माँगना या भीख देना मना है। कोई आप से दान की याचना नहीं करेगा। यहाँ के सभी कर्मचारी सरकारी नौकर है। यहाँ का मुक्त अनुशासन देखकर भक्तगणों को बड़ी प्रसन्नता महसूस होती है

भगवान की पूजाविधि और दानधर्म की दर निश्चित की गई है। पहले कार्यालय में रकम अदा करने पर रसीद दी जाती है। वह रसीद पूजासाहित्य के पात्र में रखकर पंडितजी के पास देनी पडती हे। पूजा की विधि दूर से ही देखनी पडती है। पूजा के बाद प्रसाद दिया जाता है

चांदी के चद्दर से मढवायें गए अरघे पर सफेद हीरों से बनी श्रीरामेश्वर की लिंगमूर्ति है। लिंगमूर्ति पर शेषनाग के फन का छत्र है। इसी लिंगमूर्ति पर गंगोदक और बेल–पत्ते अर्पित किए जाते है। श्रीरामेश्वर के दर्शन के बाद भक्तजन पावन होते है। प्रदोष, शिवरात्रि आदि पर्व पर रामेश्वर की पालकी को हाथी पर हौदे में रखकर उसका जुलूस निकाला जाता है। मंगलवार और शुक्रवार के दिन पार्वतीमाता की ३ फूट ऊँची स्वर्णमूर्ति की पालकी निकलती है।

उत्सवमूर्ति को वस्त्र और अलंकारों से सुसज्जित किया जाता हैं। सभी पर्व और उत्सवों में मंदिरों को दीपों से प्रकाशमान किया जाता है। इन दीपों की शोभा देखनेलायक होती हैं। हर रोज बडे सबेरे ४ बजे से लेकर रात को १० बजे तक मंदिर में भक्तगण आते रहते है। पूजापाठ चलता है। रात की आरती के बाद भगवान के शयनगृह मं सुवर्ण–झूलें में शंकर–पार्वती की भोग–मूर्तियाँ रखी जाती है।

यहाँ महाशिवरात्री और आषाढ महीने के १५ दिन में बडत्रा–मेला लगता है। जो धूमधाम से मनाया जाता है। नेपाल और पूरे भारतवर्ष से भक्तगण श्रीरामेश्वर आते और ज्योतिर्लिंग दर्शन पाकर धन्य होते है। विविध वेष, भाषा के लोगों का यहाँ ताँता लगा रहता है। भारत की एकता का दर्शन यहाँ दिखाई पड़ता है।

जय श्रीरामेश्वर! जय श्रीरामेश्वर

7/11, 13/12
30/1/1, 18/3/1, 23/5/1, 16/5/1, 13/6/1, 8/7/1, 4/8/1(M), 24/3/3(M), 8/2/4
ॐ 18/7/5(M)

८. श्रीनागनाथ



"अमर्दकं इदं काशी दुग्धेयं किल जान्हवी।
विश्वेशो नागनाथोयं भवानी कनकेश्वर।।"

दक्षप्रजापतीने महायज्ञ के समय श्री शंकर जी को निमत्रंण नही दिया था। पार्वती यह अपमान सह न सकी। पार्वती ने यज्ञकुंड में कूदकर आत्माहूति दी। इस समाचार से शंकर भगवान दुखी हुए। वे जंगल–जंगल भटकते रहे। घूमते–घूमते वे अमर्दक नाम की एक विशाल झील के तटपर आकर रहने लगे।

इस स्थानपर भी उनके संबंध में कुछ अपमानस्पद घटनाएं घटी। परिणाम यह हुआ कि विरक्त शंकरभगवान ने अपना शरीर भस्म कर डाला। कुछ समय बाद वनवासी पांडवों ने उस अमर्दक झील के परिसर में अपना आश्रम बनाया। उनकी गायें पीने के लिये उस झील पर आती थी। पानी पीने के बाद गायें अपने स्तन से दुग्धधाराएं बहाकर झील में अर्पित करती थी। एक दिन भीम ने यह चमत्कार देखा। उन्होनें धर्मराज को यह बात बतायी। तब धर्मराज ने कहा, "इस झील में कोई दिव्य देवता निवास कर रहा है। फिर पांडवों ने झील का पानी हटाना शुरू किया। झील के मध्य में पानी इतना उष्ण था कि वह उबल रहा था।

तब भीम ने हाथ में गदा लेकर झील के पानी पर तीन बार प्रहार किया। पानी झट से हट गया। उसी समय भीतर से पानी के बदले खून की धाराएँ निकलने लगी। भगवान शंकरजी का दिव्य ज्योतिर्लिंग झील की तलहटी पर दिखाई दिया।

पश्चिमी समुद्र तट पर सोलह योजन विस्तार वाले एक बन में दारूक और दारूका रहते थे। दारूक के उत्पातों से संत्रस्त ऋषि तथा अन्य लोग ओर्वमुनि की शरण में गये जिन्होनें दैत्यों को नष्ट हो जाने का शाप दिया। देवताओं ने उन पर आक्रमण किया तो राक्षस चिन्तित हो उठे। पार्वती द्वारा प्राप्त शक्ति बल पर तारूका उस वन को आकाश मार्ग से उड़ाकर समुद्र के बीच ले आई और अब सभी राक्षस

निश्चिन्त होकर वहां रहने लगे। वे नौका द्वारा समुद्र में जाकर ऋषि–मुनियो को पकडकर बन्दी बनाने लगे। एक बार जिन लोगों को दुष्टों ने बन्दी बनाया, उनमें एक शिव भक्त सुप्रिय नामक वैश्य था। वह बिना –शिव पूजन किए अन्न जन ग्रहण नहीं करता था। उसने जेल में भी भगवान शिव की आराधना –पूजन कीर्तन प्रारम्भ कर दिया। 26|2|4, ॐ 25|2|5(m)

जेल के रक्षकों ने जब अपने स्वामी को सूचना दी तो उसने अपने सेवक को उसकी हत्या का आदेश दिया, इस पर सुप्रिय भगवान शंकर की प्रार्थना करने लगा। भगवान शंकर ने प्रकट होकर क्षण मात्र में ही कुटुम्बियों सहित राक्षसों को मार डाला तथा उस वन को चारों वर्णो के लोगों के विश्वास के लिए खोल दिया। इधर दारूका को पार्वती ने वर दे रखा था। इसके फलस्वरूप देवी ने उस युग के अन्त में राक्षसी सृष्टि होने और द्वारिका के शासिका बनाने की बात कही, जिसे शिव ने स्वीकार कर लिया। फिर वहां शिवजी और पार्वती स्थिर हो गये और उनके ज्योतिर्लिंग का नाम नागेश्वर पड़ा तथा पार्वती नागेश्वरी कहलाई।

नागेश मंदिर का शिल्प–सौंदर्य अनोखा है। पत्थरों से बना यह पांडवकालीन मंदिर मजबूत और विशाल है। मंदिर की चारदीवारी भी मजबूत है तथा मंदिर के बरामदे भी विस्तृत है। सभामंडप आठ खम्भोंपर आधारित है। मंडप का आकार गोल है। सभा मंडप और गर्भग्रह इनकी सतह समान है। नागेश की मुख्य लिंगमूर्ति आंतरिक छोटे गर्भगश्ह में रखी है।

यहाँ महादेव के सामने नंदी नहीं हैं मुख्य मंदिर के पीछे नंदीकेश्वरजी का अलग मंदिर है। मुख्य मंदिर के चारों ओर बारह ज्योतिर्लिंग के छोटे मंदिर भी बाँधे हुए है। इसके अतिरिक्त वेदव्यासलिंग, भंडारेश्वर, चिंतामणेश्वर, नीलकंठेश्वर, गणपति, दत्तात्रेय, मुरलीमनोहर, दशावतार आदि अनेक मंदिर, मूर्तियाँ तथा तीर्थ है। इस तीर्थ स्थान में १०८ शिवालय और ६८ तीर्थ है।

नागनाथ मंदिर का बाँधकाम अतिसुंदर है। उसके अंरतभाग में और एक ऋणमोचन तीर्थ है। दोनों तीर्थो का 'सास–बहू का तीर्थ' यह नाम पड गया है। इस नागनाथ तीर्थ में हर १२ वर्षो के बाद कपिलाषष्ठी के समय काशी गंगा का पर्दापण होता है। इस वक्त तीर्थकुंड का पानी बिल्कुल निर्मल दिखाई देता है। और समय पर वह शैवालयुक्त होता हैं 31|3|3, ॐ 1|8|5(m)

नागनाथ मंदिर के आसपास अनके देवताओं की मूतियाँ है। इसके अलावा प्राणी, सैनिक और कथाओं पर आधारित कई मूर्तियाँ है। शिलाखण्डों में बनी इन मूर्तियों को देखने से मन आनंदित हो उठता है। एक बृहत् कोने में रूठी हुई पार्वती को शिवजी मना रहे है। इस दृश्य पर बनी मूर्ति को देखकर लोग दाँतो तले ऊँगली

दबाते है। यह मूर्ति भाव-शिल्प की एक बेजोड कलाकृति है। आनंदी महाराज, तुपकरी आदि का समाधि–स्थान, विसोबा खेचर और नामदेवजी का स्मृतिस्थान यहाँ है। गुरू–शिष्य की कथा कुछ इस प्रकार है।

औंढ्या नागनाथ क्षेत्र मं शक् १२१२ में संत गोरा कुंभार के घर एक बार संत–मंडली जमा हुई थी। उस वक्त संत गोरा कुंभार ने सहजभाव से सभी सभी संतों के सिरपर हाथ से थपथपाया, जैसे मटके की परख की जाती है। अंत में कुंभार ने कहा "सभी संतों का मटका पक्का है, केवल नामदेवजी अभी कच्चे है।" यह सुनकर नामदेवजी को बडा क्रोध आया। वे पंढरपुर गये। शिकायत करते हुए उन्होने भगवान विठोबा को गोरा कुंभार की बात बतायी। इसपर विठोबा ने कहा "तुमने अभी तक किसी को गुरू नहीं माना इसलिए अभीतक तुम्हारा ज्ञान कच्चा है।" नामदेवजी अपनी भूलपर पछताए, वे भटकते हुए औढ्या नागनाथ मंदिर में पहुँचे। उन्होने मंदिर में ऐसा दृश्य देखा कि अचम्भे में पड़ गये।

विसोबा खेचर नामका एक बूढा शिवभक्त नागेशजी की लिंगमूर्ति पर अपने पैर रखकर कराह रहा था। नामदेवजी से यह देखा नहीं गया, उन्होनें इस बूढ़े से कहा– "आप यह क्या गजब कर रहे हो? लिंगमूर्ति पर पैर रखकर सो रहे हो? यहाँ से पैरों को हटा दीजिए।" इस पर विसोबाजी ने कहा– "मैं वृद्ध हूँ, मुझसे पैरों को हटाने की ताकत नहीं है। आप ही यह काम कीजिए, बडी कृपा होगी।"

नामदेव जी ने उस वृद्ध आदमी के पैर लिंगमूर्ति से हटाकर दूसरी जगह रखे तो वहाँ दूसरी लिंगमूर्ति दिखायी दी, जिसपर वृद्ध के पैर थें। इस तरह कई बार पैर हटाये गये लेकिन पैर जमीन पर नहीं बल्कि लिंगमूर्ति पर ही दिखाई देते थे। आखिर नामदेवजी ने उस वश्द्ध को अपना गुरू मानकर कुछ उपदेश देने को कहा। गुरूदेव विसोबा खेचरने नामदेवजी को उपदेश किया– "भगवान का अस्तित्त्व कणकण में है। ऐसी कोई जगह नहीं जहाँ भगवान नहीं है!" इस प्रकार विसोबा खेचर के रूप में नामदेवजी को गुरू प्राप्त हुआ। औंढ्यानागनाथ में विसोबाजी की समाधि है, जो गुरूस्थान कहलाती हैं।

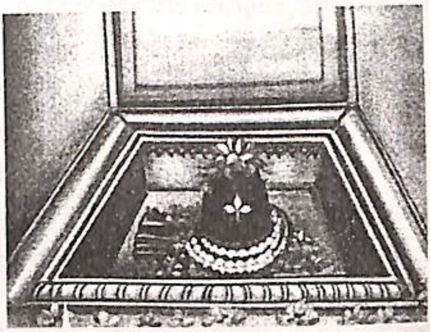
एक बार संत नामदेव ने औंढ्यानागनाथ के मंदिर में भजन–कीर्तन करना चाहा। वे मंदिर में भजन–कीर्तन करने लगे। उसी समय ब्राह्मणवृंद रूद्रमंत्र पठन कर रहे थे। नामदेवजी के भजन–कीर्तन के कारण ब्राह्मणों की पूजा–पाठ में बाधा आ रही थी। उन्होंने नामदेवजी को मंदिर के पीछे जाकर भजन–कीर्तन करने को कहा। नामदेवजी ने मंदिर के पीछे जाकर भजन–कीर्तन आरंभ किया। इतने में चमत्कार हुआ। मंदिर ही पीछे घूम गया। भगवान शंकरजी नामदेव का कीर्तन सुनने के लिए खुद पीछे मुड गए। ब्राह्मण मंडली को पछतावा हुआ। उन्होनें नामदेवजी के पास आकर अपनी भूलपर शर्म प्रकट की और क्षमायाचना की।

धर्मांध औरंगजेब ने इस मंदिर को तोडना चाहा, तब मंदिर से हजारों भ्रमर बाहर आकर औरंगजेब और उसके सैनिकों पर टूट पडे। तोडने का काम बीच में ही अधूरा छोडकर औरंगजेब वहाँ से चला गया। भक्तजनों ने भग्न मंदिर को फिरसे ठीक किया।

कभी–कभी नागनाथजी की लिंगमूर्ति पर फन फैलाए हुए नागदेवता दिखाई देते है। वे कटोरी में रखा दूध कब पीते है इसका पता भी नहीं चलता।

जय श्रीनागनाथ! जय श्रीनागनाथ!

६. श्रीविश्वेश्वर



'वाराणसी तु भुवनत्र्यसारभूता ।
रम्या नृणां सुगतिदा किल सेव्यमाना ।।
अत्रगता विविधदुष्कृत कारिणोऽपि ।
पापक्षये विरजसः सूमनप्रकाशाः ।।

—नारदपुराण

वारुणी और असी नदियाँ गंगाजी में जहाँ मिलती हैं, उस संगमस्थल पर प्राचीन काल में एक दिव्य नगर निर्माण हुआ। उसका नाम वाराणसी रखा गया। तीर्थस्थान वाराणसी में काश जाती के लोग रहते थे अतः वाराणसी को काशी भी कहा जाता है। काशी के पास गंगा को धनुष्याकार प्राप्त हुआ। अतः काशी को विशेष महत्व प्राप्त हुआ है। दिवोदास नाम के एक महान राजा ने इस क्षेत्र का विस्तार किया

निर्तिकार सेतन्य एवं सनातन ब्रह्म ने प्रथम निर्गुण से सगुण शिवरुप धारण किया और पुनः शिव शक्ति रुप से पुरुष स्त्री भेद से दो रुप धारण किये। प्राकृति पुरुष (शक्ति–शिव) को भगवान शिव ने उत्तम सृष्टि के लिए आकाशवाणी द्वारा तप

करने का आदेश दिया। उन्होनें तप के लिए उत्तम स्थान निर्देश की जब प्रार्थना की तो निर्गुण शिव ने अपनी ही प्रेरणा से समस्त तेज सम्पन्न अत्यन्त शोभायमान पंचकोशी नगर का निर्माण किया वहां उपस्थित हो विष्णुजी ने बहुत काल तक शिवजी का ध्यान करते हुए तप किया, तब उनके परिश्रम से वहां अनेक जल धारायें प्रकट हो गई। इस अद्‌भुत दृश्य को देखकर विस्मित होते हुए विष्णु जी ने ज्योंही सिर हिलाया त्योंही उनके कान में से एक मणि वहाँ गिर पड़ी जिससे उस स्थान का नाम मणिकार्णिकी तीर्थ पड़ गया। मणिकार्णिका के उस पांच कोस विस्तार वाले सम्पूर्ण जल को शिवजी ने अपने त्रिशूल पर धारण किया, जिसमें विष्णु जी अपनी स्त्री सहित सो गए और शिवजी की आज्ञा से उनके नाभि कमल से ब्रह्माजी की उत्पति हुई। ब्रह्माजी ने शिवजी की आज्ञा से इस अद्‌भुत सृष्टि की रचना की जिसमें पचास करोड़ योजन विस्तृत चौदह लोक हैं। अपने ही कर्मो में बंधे प्राणियों के उद्धार के विचार से शिवजी ने पंचकोशी नगरी को सम्पूर्ण लोकों से पृथक रखा। इसी नगरों में शिवजी ने अपने मुक्तिदायक ज्योतिलिंग को स्वंय स्थापित किया, जो इसे कदापि नहीं छोड़ सकता। शिवजी ने पुनः उसी काशी को अपने त्रिशूल से उतार कर मृत्यु लोक में स्थापित कर दिया जो ब्रह्मा का दिन पूरा होने पर नष्ट नहीं होती पर प्रलय में शिवजी उसे पुनः अपने त्रिशूल पर धारण किये रहते हैं। काशी में अविमुक्तेश्वर लिंग सदा स्थित रहता है। कहीं भी गति न पाने वाले प्राणियों की वाराणसी पुरी में गति हो जाती है

महा पुण्यदायक पंचकोशी नगरी कोटि – कोटि धारतम पातकों की नाशिका और संयुज्य नामक उत्तम मुक्ति की दायिका है। यही कारण है कि ब्रह्मा, विष्णु और महेश द्वारा प्रशासित इस नगर में देवता भी मृत्यु की कामना करते हैं। भीतर से स्त्वगुणी और बाहर से तमोगुणी रुद्र की प्रार्थना पर पार्वती सहित विश्वनाथ भगवान् शंकर ने इस नगर को अपना स्थाई निवास बताया है ।

काशी नगरी मोक्ष की प्रकाशित और ज्ञानदात्री है । यहाँ के निवासी किसी भी तीर्थादि की यात्रा किए बिना ही मुक्ति के भागी हो जाते हैं । इसी काशी में मरने वाला प्रत्येक व्यक्ति – बालक, युवा, वृद्ध, सधवा, विधवा, पवित्र, अपवित्र, प्रसूता, अप्रसूता, स्वदेश, अण्डज, उदिभज, ब्राहमण, क्षत्रिय, वैश्य तथा शुद्र मोक्ष को प्राप्त करता है इसमें अणुमात्र भी सन्देह नहीं । मनुष्य चाहे भोजन करता हो, सोता हो, अथवा अन्य क्रियाओं को करता हो , अविमुक्तेश्वर के पास प्राणों को छोड़ने पर अवश्य ही मोक्ष का भागी बनता है । इस क्षेत्र में किया सत्कर्म सहस्त्र कल्पों में भी क्षय को प्राप्त नहीं होता । शुभ तथा अशुभ प्रकार के मनुष्य का जन्म होता है । काशीवास से दोनों को ही मुक्ती प्राप्त होती है ।

बाद में अनेक लोगों ने इस ज्योतिलिंग के स्थानपर मंदिर निर्माण किए । बनार नाम के राजा ने इस तीर्थस्थान का वैभव और बढ़ाया । अतः काशी को बनारस नाम प्राप्त हुआ । बनारस में लगभग डेढ़ हजार भव्य मंदिर बाँधे गए । विश्वेश्वर मंदिर का शिखर सौ फुट ऊँचाई का है । 14/4/13

काशीनगर का इतना महत्व है कि प्रकृति के विनाश काल में भी यह काशी ज्यों कि त्यों शेष रहेगी । संरक्षक रुप में दण्डपाणि और कालभैरव इस नगरी की रक्षा कर रहे हैं । इनका निवास यहाँ हमेशा के लिए रहा है । यहाँ गंगा के किनारे चौरासी मजबूत घाट बाँधे हैं । कई तीर्थकुण्ड यहाँ है । जिसका वैभव वेदकाल से चला आ रहा है और जो हिन्दुओं की पवित्र नगरी है ऐसी वाराणसी मुस्लिम शासकों के लिए काँटा बन गई । १०३३ ई० से १६६६ ई० तक उन्होनें काशी का कई बार विध्वंस किया । मंदिरों को गिराकर उन स्थानों पर मस्जिदें खड़ीं कीं । परंतु विश्वेश्वर भगवान शंकरजी की कृपा से हिन्दुओं के ओजमय भक्ति से यहाँ पुनः ज्योतिलिंग तीर्थस्थान का विकास होता ही रहा । अंग्रेजों और मराठों के शासन काल में इस स्थान का वैभव वृद्धि को प्राप्त हुआ। जैन और बौद्ध धर्मियों ने इस तीर्थस्थान के वैभव में चार चाँद लगा दिये।

संप्रति काशीविश्वेश्वर का मंदिर १७७७ ई० में अहिल्यादेवी होलकर ने बाँधा है। १७८५ ई० में काशीराज मन्साराम और उसके सुपुत्र बलवंत सिंह ने वाराणसी परिसर में कई मंदिर बनाये। १७५५ ई० में औंध के पंतप्रतिनिधि ने यहाँ के बिंदुमाधव के पुराने मंदिर की मरम्मत करके उसका सुंदर ढंग से पुनरुज्जीवन किया। १८५२ ई० में श्रीमंत बाजीराव पेशवा ने कालभैरव का मंदिर बनवाया।

महाराजा रणजीत सिंह ने काशीविश्वनाथ के मंदिर के शिखरों को सुवर्णो से मढ़वाया । इस मंदिर को प्रचंड घंटा नेपाल नरेश ने प्रदान किया । सारनाथ के परिसर में बौद्ध लोगों के अनेक स्तूप, विहार और चैत्यगृह हैं । १९३१ ई० में महाबोधी सोसायटी ने सारनाथ में एक अतिसुंदर बुद्ध मंदिर बनाया है ।

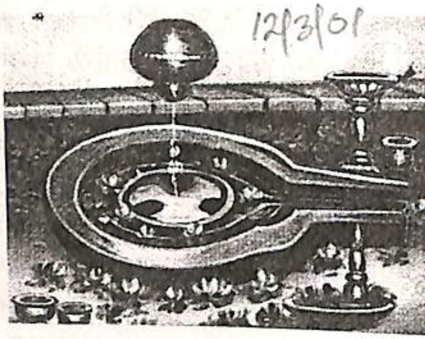
काशी के पवित्र स्थान को भेंट देने के लिए हिन्दु धर्मीय लोग यहाँ आते हैं। अनेक धार्मिक कार्य समाप्त करके अपने आपको धन्य मानते हैं । साथ– साथ देश विदेश के अनेक धर्मीय लोग यहाँ नित्यक्रम से आते हैं । यहाँ के दर्शनीय घाट, मंदिर, तपोभूमि और प्रकृतिसौंदर्य देखकर हर्षित और चकित होते हैं । काशी क्षेत्र और श्रीविश्वेश्वर को ज्योतिलिंग विश्व का अतिपवित्र, श्रद्धास्थान है । यहाँ का गंगोदक भूलोक का अमृत है । काशीक्षेत्र में मृत्यु तथा अंत्यसंस्कार ये मुक्ती के मार्ग माने जाते हैं ।

जय गंगे, जय विश्वनाथ, ओऽम नमः शिवाय। इन जयनादों से वहाँ का

वातावरण गूँज उठता है। संस्कृत में काशी वाराणसी के देवताओं का वर्णन निम्नप्रकार किया है :

विश्वेशं माधवं धुंडि। दंडपाणिं च भैरवं।।
वंदे काशीं गश्हांगंगा। भवानी माणिरुकर्णिकाम्।

१० श्रीत्र्यंबकेश्वर



भगवान शंकर के बारह ज्योतिर्लिंग में से दसवाँ स्थान त्र्यंबकेश्वरजी का है। गौतमी तट का दिव्य ज्योतिर्लिंग अपना एक अनोखा रुप धारण किए हुए है। यहाँ के मंदिर के गर्भगृह में अन्य स्थानों की तरह शिवलिंग पर जलहरि (शालुंका) अर्थात् अरधा नहीं है। उस स्थान पर उखली जैसा केवल गढ्ढा दिखाई देता है।

उस गढ्ढे में अँगूठे के आकार के तीन लिंग हैं। ब्रह्मा, विष्णु और महेशजी के ये तीन लिंग यानि त्र्यंबकेश्वर ही हैं। उन तीन में से महेशजी के लिंग पर से एक खोंडर का पानी हमेशा बहता रहता है । प्रकृति के द्वारा लगातार होने वाला यह अभिषेक ही है।

इस ज्योतिर्लिंग में से कभी– कभी सिंह की दहाड़ सुनाई देती है। कभी – कभी आग की दिव्य ज्वालःएँ भी निकलती हैं। ऐसे समय पर शंकरजी के क्रोध से बचने के लिए भंगमिश्रित दूध के घड़े लिंग पर ऊँडेलकर रुद्राभिषेक मंत्रों का जयघोष किया जाता है। पूरा दूध उस गढ्ढे में रिस जाता है। दूध का रिसना जब बंद होता है तब प्रभुजी शांत हुए हैं ऐसा माना जाता है।

इस तरह का यह अलौकिक दिव्य ज्योतिर्लिंग संप्रति स्थान पर किस तरह प्रकट हुआ इसकी एक कहानी है।

अहिल्या के पति गौतम दक्षिण ब्रह्म पर्वत पर तप करते थे। वहाँ एक समय सौ वर्षो तक पानी न बरसने से पृथ्वी का पालापन जाता रहा। जीवों के प्राणश्रत

जल के अभाव में वहाँ के निवासी मुनि तथा पशु– पक्षी आदि उस स्थान को छोड़कर भाग चले। ऐसी घोर अनावृष्टि को देखकर गौतम जी ने छः मास तक प्राणायाम द्वारा मांगलिक तप किया। जिससे प्रसन्न होकर प्रकट हुए वरुण से उन्होनें जल का वरदान मांगा। वरुणदेव के कहने पर गौतम ने हाथ पर गहरा गढ्ढा खोदा। जिसमें वरुणजी की दिव्य शक्ति से जल भर आया। वरुणजी ने कहा कि तुम्हारे पुण्य प्रताप से यह गढ्ढा अक्षय जल वाला तीर्थ होगा, तुम्हारे ही नाम से प्रसिद्ध होगा और यज्ञ, दान, तप, हवन, श्राद्ध और देवपूजा करने वाले को विपुल फल देने वाला होगा। उस जल को पाकर वहां के ऋषियों ने यज्ञ के लिए वांछित ब्रीहिका उत्पादन आरम्भ किया।

एक बार गौतम के शिष्य उस गढ्ढे से जल लेने गए तो उसी समय वहां अन्य ऋषियों की पत्नियां भी जल लेने आ पहुँची। और पहले जल लेने को हठ करने लगीं । गौतम के शिष्य गौतम पत्नी को बुला लाए और उसने हस्तक्षेप करके शिष्यों को ही पहले जल लेने की व्यवस्था की। ऋषि पत्नियों ने इसे अपना अपमान समझा और नमक–मिर्च लगाकर अपने पतियों को भड़काया। उन ऋषियों ने गौतम से इस अपमान का प्रतिशोध लेने के लिए गणेश जी का तप किया। गणेश जी ने प्रकट होकर वर मांगने को कहा। इस पर ऋषियों ने गौतम की अनिष्ट माना करते हुए उसे वहां से अपमानित करके निकालने की शक्ति देने का वर मांगा। गणेश जी ने परोपकारी महात्मा गौतम – जिन्होनें जल लाकर उन ऋषियों का कष्ट दूर किया था के प्रति दुर्भावना न रखने का ही अनुरोध किया परन्तु ऋषियों के हठ पकड़ने पर गणेश जी ने उनकी प्रार्थना स्वीकार कर ली और साथ ही उन्हें परोपकारी महात्मा गौतम को कष्ट देने के दुष्परिणाम भुगतने के लिए प्रस्तुत रहने को चेतावनी भी दी।

एक दिन गौतम जी जब ब्रीहि लेने गए तो एक दुबली पतली गाय खड़ी थी। गौतम जी ने लौ की लकड़ी ज्योंही गाय हटाने के लिए मारी त्योंही गाय वहाँ गिरकर ढेर हो गई। बस फिर क्या था ऋषियों ने गौ हत्या का पाप गौतम के माथे पर मढ़कर उन्हें बहुत अपमानित किया और उस स्थान को दुःख ताप से बचाने के लिए वहां से चले जाने को कहा। गौतम जी बहुत दुखी हुए और आत्मगलानि से वह स्थान छोड़कर चले गए।

गौतम जी ने गौ हत्या के पाप की निवृति के लिए ऋषियों द्वारा बताए गए उपाय –अपने तप से गंगा जी को लाकर स्नान करना और कोटि संख्या में पार्थिव लिंगों को बनाकर शिवजी की पूजा करना अपनाया। शिवजी ने प्रसन्न होकर उसे बताया कि वह तो शुद्धान्तः करण वाला महात्मा है। उसके साथ अन्याय हुआ है अन्यथा उसने कोई पाप नहीं किया । शिवजी ने गौतम से वर मांगने को कहा तो

गौतम ने शिवजी से उसे गंगा देकर संसार का उपकार करने का वर मांगा । शिवजी ने गंगा जी का तत्वरुप अविशिष्ट जल मुनि को प्रदान किया। गौतम ने प्राप्त गंगा से अपने को गौ हत्या के पाप से मुक्त करने की प्रार्थना की। गंगाजी ने गौतम को पवित्र करने के उपरान्त स्वर्ग चले जाने का निश्चय प्रकट किया परन्तु शिवजी ने कलयुग पर्यन्त उसे धरती तल पर ही रहने का आदेश दिया तो गंगा ने उनसे प्रार्थना की कि फिर आप भी पार्वती सहित पृथ्वी तल पर निवास करें। संसार के उपकारार्थ शिवजी ने यह स्वीकार कर लिया।

गंगाजी ने शिवजी से पूछा कि उसकी महत्ता का संसार को कैसे पता चलेगा। तब ऋषियों ने कहा कि जब तक बृहस्पतिवार सिंह राशि पर स्थित रहेंगे, तब तक हम सब यहां तुम्हारे तट पर निवास करेंगे और नित्य तीनों काल तुम्हारे तट पर निवास करेंगे और नित्य तीनों काल तुम में स्नान कर शिवजी का दर्शन करते रहेंगे। इससे हमारे पाप छूट जायेंगे। यह सुनकर गंगाजी और शिवजी वहां स्थित हुए। गंगा गौतमी नाम से प्रसिद्ध और लिंग त्र्यम्बक नाम से विख्यात हुआ।

गो–दान करनेवाली नदी गोदावरी बन गई। गौतम ऋषि के लिए आयी हुई गंगा गौतमी गंगा बन गई। ब्रह्मगिरी से निकली तब मुहूर्त था– कूर्मावतार के बाद वराह अवतार के बीच का संधिपर्व, गुरु सिंह राशि में था (सिंहस्थ), माघ शुद्ध दशमी, गुरुवार का माध्यान्ह समयपर गौतमी गंगा प्रकट हुई।

ब्रह्मा और विष्णु के साथ शंकरजी त्र्यंबकेश्वर बनकर दिव्य ज्योतिर्लिंग के रूप में भक्त गणों के कल्याण के लिए बस गये। ब्रह्मगिरी का यह प्रदेश भी लिंगमूर्ति की तरह दिखाई देता है। उसकी चोटी से पावन गौतमी गंगा का जल झरझर बहता है।

ब्रह्मगिरी के जिस कगार से गोदावरी निकलती है, उस स्थान को गंगाद्वार कहते हैं। यहाँ के एक गोमुख से गंगा का पानी नित्य रूप से बहता है। गोदावरी माता का मंदिर भी इसी उद्‌गम स्थान पर है। मंदिर में माता की प्रसन्न मूर्ति दिखाई देती है। इसके पास ही वराहतीर्थ है।

गंगाद्वार से निकलकर गोदावरी आगे चलकर कुछ अंतरपर लुप्त होती है और तहलहटी में फिर से प्रकट होती है। वह वहाँ से फिर लुप्त न हो इसलिए गौतम ऋषिने चारों दिशाओं पर दर्भ फेंक दिए जिससे गोदावरी कुशावर्त में बहती रही। यह कुशावर्त महातीर्थ २७ मीटर वर्गाकार के रूप में है। यह पावन तीर्थ मजबूत है। आने–आने के लिए चारों ओर सीढ़ियों का प्रबंध किया गया है।

सिंहस्थ पर्व में प्रति बारह वर्षों के बाद यहाँ कुंभमेला लगता है। लाखों लोग इस कुशावर्त में स्नान कर अपने आपको पवित्र मानते हैं। इस कुशावर्त तीर्थ के चारों

ओर बरामदे बनाए गए हैं। वहाँ सुन्दर मूर्तियाँ भी खुदवायी गई हैं। ब्रह्मगिरी के तलहटी में कुशावर्त के पास गंगासागर नाम का एक बड़ा तालाब है। उसके पास ही निवृत्तिनाथ की समाधि और गोरक्षागुफा है। ज्ञानेश्वरजीने आलंदी में समाधि लेने के उपरान्त बड़े भाई के पहले छोटे भाई ने इहलोक की यात्रा समाप्त की, इससे निवृत्तिनाथ उदास हुए थे। उन्होंने कुछ समय के पश्चात् ही अपने गुरु गहिनीनाथ की इस तपोभूमि में समाधि ली। ~~इसी गुफा में गहिनीनाथजीने निवृत्तिनाथ को नाथपंथ की दीक्षा दी थी।~~ इसी गुफा में गहिनीनाथजीने निवृत्तिनाथ को नाथपंथ की दीक्षा दी थी। कहते हैं– इसी स्थान पर श्रीदत्त भगवान को सिद्धी प्राप्त हुई थी। पास में ही नीलपर्वत है जहाँ नीलम्बिका का स्थान है। अंजली पर्वत पर हुनमानजी की माता अंजनी ने तप किया था।

ब्रह्मगिरी का एक पहाड़ी किला आज भग्नावस्था में हैं। बरसों पहले वह देवगिरी के यादवों ने बाँधा था। बाद में उस पर मुगल, मराठा, निजाम, पेशवा, अंग्रेजों का कब्जा रहा। देश की आजादी के बाद भी वह आज भग्नावस्था में है। इस ब्रह्मगिरी का फेरा लगाना बड़े पुण्य का काम माना जाता हे। अपनी सुविधा के अनुसार १, २०, ३१ बार परिक्रमा का कार्य बड़े पुण्य का कार्य माना जाता है।

परिक्रमा के मार्ग में रामतीर्थ, प्रयागतीर्थ, नृसिंहतीर्थ आदि सुंदर स्थान हैं। श्रीमान् पेशवाओं ने प्रति २५ हाथों के अंतर पर वृक्षारोपण किया है। पेशवा के शासनकाल में गुनाहगारों को ब्रह्मगिरी की परिक्रमा करने की सजा दी जाती थी।

त्र्यंबक शहर समुद्री सतह से लगभग ढाई हजार फीटकी ऊँचाई पर बसा है। यह हवा खाने का स्थान है और पवित्र तीर्थस्थान भी। भगवान त्र्यंबकेश्वर का मंदिर श्रीमान् नानासाहब पेशवाने बनाया है। मंदिरके चारों ओर पत्थरों के खंभों पर सुंदर नक्काशी का काम किया हुआ है। मुख्य मंदिर के सामने नंदी का भी एक मंदिर है। नौबतखाने में हररोज नक्कारे बजानेवाले उपस्थित रहते थे।

त्र्यंबकेश्वर ज्योतिर्लिंग के मंदिर में नित्य पूजा, आरती और प्रसाद आदि कार्यक्रम होते हैं। विशेष समय पर बड़े उत्सव भी आयोजित किए जाते हैं। ऐसे विशेष पर्व में भगवान को ऊँचे वस्त्र और अलंकारों से सजाया जाता है और रत्नों से जड़ा ताज भी पहनाया जाता है। यह ताज नारो शंकरजी ने दक्षिण भारत में किए आक्रमण के समय प्राप्त किया था। यह ताज उन्होंने शंकरभगवान को समर्पित किया। सरदार विंचुरकरजीने भगवान के लिए एक सुंदर रथ भी दिया था।

प्रति सोमवार के दिन त्र्यंबकेश्वर की पालकी बड़े गाजेबाजे के साथ और बड़े ठाट से कुशावर्त जाकर वापस आती है। त्र्यंबकेश्वर के पास गौतमी गोदावरी में अहिल्या यह एक छोटी नदी आकर मिलती है। इस संगम–स्थल पर कुछ लोग

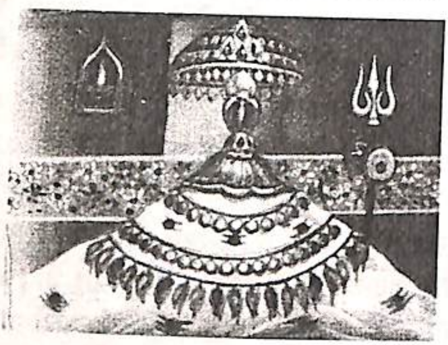
नागनारांबल–नागनारायणबल नाम के एक विशेष विधि का आयोजन करते हैं। पूर्वजोंकी कुछ अतृप्त आशाओं के कारण कुछ लोगों को संतान नहीं होती। इस दोष को हटाने के लिए तथा कुछ बाधाओं को दूर करने के लिए यह नागनारांबल विधि किया जाता है। यह विधि उत्तर भारत क्रिया की तरह होता है। कहते हैं कि मनौती के रूप में यह विधि पूरा करने पर उन लोगों को संतान प्रापत हुई है। किसी ने कहा–

"तत्र गत्वा कुरु श्राद्ध पितुनुद्दिश्य यत्नतः।"

इस प्रकारयह त्र्यंबकेश्वर का ज्योतिर्लिंग अनोखा, महान, पवित्र और दिव्य तीर्थस्थान है।

जय त्र्यंबकेश्वर! जय त्र्यंबकेश्वर!

११. श्रीकेदारनाथ



शंकर भगवान के बारह ज्योतिर्लिंग में से श्रीकेदारनाथ का ज्योतिर्लिंग हिमाच्छादित प्रदेश का एक दिव्य ज्योतिर्लिंग है। हिमालय की देवभूमि में बसे इस तीर्थस्थान के दर्शनकेवल छः माह के काल में ही होते हैं। बैशाख से लेकर आश्विन महीने तक के कालाविधि में इस ज्योतिर्लिंग की यात्रा लोग कर सकते हैं। वर्ष के अन्य महीनों में कड़ी सर्दी होने से हिमालय पर्वत का यह प्रदेश बर्फाच्छादित रहने के कारण श्रीकेदारनाथ का मंदिर दर्शनार्थी भक्तों के लिए बंद रहते है।

कार्तिक महीने में बर्फवृष्टी तेज होने पर इस मंदिर में घी का नंदादीप जलाकर श्रीकेदारेश्वर का भोगसिंहासन बाहर लाया जाता है। और मंदिर के द्वार बंद किये जाते हैं। कार्तिक से चैत्र तक श्रीकेदारेश्वरजी का निवास नीचे उरवी मठ में रहता है। वैशाख में जब बर्फ पिघल जाती है तब केदारधाम फिर से खोल दिया जाता है। जब इस मंदिर के द्वार खोल दिये जाते हैं तब कार्तिक महीने में जलाया

हुआ नंदादीप ज्यों का त्यों जलता हुआ नजर आता है। इस दिव्य ज्योति के दर्शन कर लेने में शिवभक्त अपने आपको धन्य मानते हैं।

हरिद्वार या हरद्वार को मोक्षदायिनी मायापुरी मानते हैं। इस हरिद्वार के आगे ऋषीकेश, देवप्रयाग, रुद्रप्रयाग, सोनप्रयाग और त्रियुगी नारायण, गौरीकुंड इस मार्ग से केदारनाथ जा सकते हैं। कुछ प्रवास मोटर से और कुछ पैदल से करना पड़ता है। हिमालय का यह रास्ता अति दुर्गम और खतरा पैदा करने वाला होता है। परंतु अटल श्रद्धा के कारण यह कठिन रास्ता भक्त–यात्री पार करते हैं। श्रद्धा के बलपर इस प्रकार संकटों पर मात की जाती है।

चढ़ान का मार्ग कुछ लोग घोड़े पर बैठकर, टोकरी में बैठकर, डाँडी या झोली की सहायता से पार करते हैं। इस तरह का प्रबंध वहाँ किया जाता है। विश्राम के लिए बीच–बीच में धर्मशालाएँ, मठ तथा आश्रम खोले गए हैं। यात्री गौरीकुंड स्थान पर पहुँचने के बाद वहाँ के गरम कुंड के पानी से स्नान करते हैं और मस्तकहीन गणेशजी के दर्शन करते हैं। गौरीकुंड का स्थान गणेशजी का जन्मस्थान माना गया है। इस स्थानपर पार्वती–पुत्र गणेशजी को शंकरजीने त्रिशूल के प्रहार से मस्तकहीन बनाया था और बाद में गजमुख लगाकर जिंदा किया था।

गौरीकुंड से दो–चार कोस की दूरी पर ऊँचे हिमशिखरों के परिसर में, मंदाकिनी नदी की घाटी में भगवान शंकरजी का दिव्य ज्योतिर्लिंग, केदारनाथ का मंदिर दिखाई देता है। यही कैलाश है जो भगवान शंकरजी का आद्य निवास–स्थान है। लेकिन वहाँ शंकरजी की मूर्ति और लिंग भी नहीं है। केवल एक त्रिकोण के आकार का ऊँचाई वाला स्थान है। कहते हैं वह महेश का (भैंसे का) पृष्ठभाग है। इस ज्योतिर्लिंग का जो इस तरह का आकार बना है उसकी अनोखी कथा इस प्रकार है–

कौरव–पांडवों के युद्ध में अपने ही लोगों की हत्या हुई। पापलाक्षन करने के लिए पांडव तीर्थस्थान काशी पहुँचे। परन्तु भगवान विश्वेश्वरजी उस समय हिमालय के कैलास पर गए हुए हैं यह समाचार मिला। पांडव काशी से निकले और हरद्वार होकर हिमालय की गोद में पहुँचे। दूर से ही उन्हें भगवान शंकरजी के दर्शन हुए। लेकिन पांडवों को देखकर शंकरभगवान लुप्त हुए। यह देखकर धर्मराज ने कहा– "हे देव, हम पापियों को देखकर आप लुप्त हुए। ठीक है, हम आप को ढूँढ निकालेंगे। आपके दर्शन से हमारे सारे पाप धुल जाने वाले हैं। जहाँ आप लुप्त हुए हैं वह स्थान अब 'गुप्तकाशी' के रूप में पवित्र तीर्थ बनेगा।

'गुप्तकाशी' से (रुद्रप्रयाग) पांडव आगे निकलकर हिमालय के कैलास, गौरीकुंड के प्रदेश में घूमते रहे। शंकरभगवान को ढूँढते रहे। इतने में नकुल–सहदेव को एक भैंसा दिखाई दिया। उसका अनोखा रूप देखकर धर्मराज ने कहा– "भगवान्

शंकरजी ने ही यह भैंसे का अवतार धारण किया हुआ है। वे हमें परख रहे हैं।

फिर क्या! गदाधारी भीम उस भैंसे के पीछे लगे। भैंसा उछल पड़ा भीम के हाथ नहीं आया आखिर भीम थक गया। फिर भी भीम ने गदा–प्रहार से भैंसे को घायल किया। फिर वह भैंसा एक दर्रे के पास जमीन में मुँह दबाकर बैठ गया। भीम ने उसकी पूँछ पकड़कर खींचा। भैंसे का मुँह इस खिंचाव से सीधे नेपाल में जा पहुँचा। भैंसे का पार्श्व भाग केदार धाम में ही रहा। नेपाल में वह पशुपतिनाथ के नाम से जाना जाने लगा।

महेश के उस पार्श्व भाग से एक दिव्य ज्योति प्रकट हुई। दिव्य ज्योति में से शंकर भगवान प्रकट हुए। पांडवों को उन्होंने दर्शन दिए। शंकर भगवान के दर्शन से पांडवों का पापक्षालन हुआ। भगवान शंकरजी ने पांडवों से कहा– "मैं अभी यहाँ इसकी त्रिकोणाकार में ज्योतिर्लिंग के रूप में हमेशा के लिए रहूँगा। केदारनाथ के दर्शन से भक्तगण पावन होंगे।" केदारधाम के परिसर में पांडवों की कई स्मृतियाँ जागृत रही हैं। राजा पांडू इसी वन में माद्री के साथ विहार करते समय मर गया था। वह स्थान पांडुकेश्वर के नाम से प्रसिद्ध है। वहाँ आदिवासी लोग पांडवनृत्य प्रस्तुत करते रहते हैं। जिस स्थान से पांडव स्वर्ग सिधारे उस ऊँची चोटी को –'स्वर्गरोहिणी' कहते हैं। धर्मराज जब स्वर्ग सिधार रहे थे तब उनका एक अँगूठा निकलकर जमीन पर पड़ा था। उस स्थान पर धर्मराज ने अँगुष्ठमात्र शिवलिंग की स्थापना की।

महेशरूप लिए हुए शंकरजी को भीम ने गदा का प्रहार किया था। अतः भीम को बहुत पछतावा हुआ, बुरा लगा। वह महेश का शरीर घी से मलने लगा। उस बात की यादगार के रूप में आज भी उस त्रिकोणाकार दिव्य ज्योतिर्लिंग केदारनाथ को घी से मलते हैं। इस स्थान पर शंकरभगवान की इसी तरह से पूजा की जाती है। पानी और बेलपत्तों से यहाँ अभिषेक नहीं किया जाता, फूल भी नहीं चढ़ते।

नर–नारायण जब बद्रिका ग्राम में जाकर पार्थिक पूजा करने लगे तो उनसे पार्थिव शिवजी वहां प्रकट हो गए। कुछ समय पश्चात् एक दिन शिवजी ने प्रसन्न होकर वर मांगने को कहा तो नर–नारायण लोक–कल्याण की कामना से उनसे स्वयं अपने स्वरूप से पूजा के निमित्त इस स्थान पर सर्वदा स्थित रहने की प्रार्थना की। उन दोनों की इस प्रार्थना पर हिमाश्रित केदार नामक स्थान पर साक्षात महेश्वर ज्योति स्वरूप हो स्वयं स्थित हुए और वहां उनका केदारेश्वर नाम पड़ा।

केदारेश्वर के दर्शन से स्वप्न में भी दुःख प्राप्त नहीं होता शंकर (केदारेश्वर) का पूजन कर पांडवों का सब दुःख जाता रहा। बद्रीकेशवर का दर्शन पूजन आवागमन के बन्धन से मुक्ति दिलाता है। केदारेश्वर में दान करने वाले शिवजी के समीप जाकर उनके रूप हो जाते हैं।

मुख्य केदारनाथ मंदिर के परिसर में अनेक पवित्र स्थान हैं। मंदिर के पिछवाड़े में आद्य शंकराचार्यजी की समाधि है। दूर की ऊँचाई पर भृगुपतन (भैरव उड़ान) नाम की एक भयानक खडत्री कगार है। वहाँ पहुँचने के लिए साक्षात् मृत्यु से सामना करना पड़ता है। मृत्यु नहीं बलिक मोक्ष प्राप्त होगा। मंदिर की आठ दिशाओं में अष्टतीर्थ हैं।

तात्पर्य यह कि श्रीकेदारनाथ ज्योतिर्लिंग के दर्शन करने के लिए अति कठिन और दुर्गम मार्ग से होकर जाना पड़ता है। लेकिन इरादे बुलंद हों और मन में श्रद्धा हो तो चलते समय थकान बिल्कुल नहीं आती। सब की जुबान पर एक ही घोष रहता – "जय केदारनाथ! जय केदारनाथ!"

श्रीमत् शंकराचार्यजी ने कहा है–

महाद्रिपार्श्वेच तटे रमन्तं।
संपूज्यमानं सततं मनिंद्रैः।
सुरासुरैर्यक्षमहोनगाद्यैः।
केदारमीशं शिवमेरूमीडे।।

अर्थात् महान हिमालय के प्रदेश में रम जानेवाले, ऋषिमुनियों द्वारा और सुर, असुर, यक्ष तथा महानाग आदि के द्वारा जिनकी निरंतर पूजा होती आयी है, ऐसे श्रीकेदारेश्वर महादेवजी को मेरे कोटि–कोटि प्रणाम!

१२. श्रीघृष्णेश्वर



"धन्य वेरूळ नगर। नहीं ऐसे धरती पर।
रहते जहाँ घृष्णेश्वर। स्थान सर्वोत्तम का।।"

– मध्वमुनीश्वर

शंकरभगवान की ज्योतिर्लिंग की यात्रा करने पर आखिर में जिनके दर्शन किए बिना यात्रा सफल नहीं हो सकती; उस बारहवे ज्योतिर्लिंगा का नाम घृष्णेश्वर है! 23/6/03

औरंगाबाद से पश्चिम की ओर लगभग ३० किमी दूरी पर वेरूल गाँव के समीप शिवालय नाम के तीर्थस्थान पर, घृष्णेश्वरजी का दिव्य ज्योतिर्लिंग है। वेरूल, शिवालय और घृष्णेश्वर के संबंध में हम जो कथाएँ सुनते आए हैं, वे इस प्रकार हें।

पहले यहाँ नाग जाति के आदिवासी लोगों की बस्ती थी। नागों का स्थान बांबी होता है; मराठी में उसे 'वारूल' कहते हैं। आगे चलकर इस स्थान को वारूल के बदले वेरूल नाम से सभी जानने लगे। यहाँ से येलगंगा नदी बहती है। उसे येलगंगा के किनारे पर स्थित गाँव को 'येरूल' यह नाम दिया गया। इस प्रदेश में पहले 'एल' नामका राजा राज कर रहा था। उसी राजा की राजधानी को येलापूर या येलूर अथवा वेरूल रही है।

एक बार एल राजा वन में शिकार करने के हेतु गया था। शिकार करते समय ऋषिमुनियों के आश्रम में रहनेवाले प्राणियों की हत्या भी एल राजा ने की। यह देखकर ऋषि–मुनियों ने राजा को शाप दिया। उस शाप से राजा के सर्वांग में कीड़े पड़ गये।

इस प्रकार एल राजा वन में भटक रहा था। तब प्यास से उसका गला सूख गया। कहीं भी पानी नहीं था। आखिर में एक स्थान पर गाय के खुर से बने गढ़ढ़ों में थोड़ा पानी राजा को दिखाई दिया। जैसे ही वह पानी राजा पीने लगा, एक चमत्कार हुआ। राजा का शरीर कीडों से मुक्त हुआ। फिर उस स्थान पर राजा ने तपस्या की। फल–स्वरूप राजा पर ब्रह्मदेव प्रसन्न हुए। ब्रह्मदेव ने उस स्थान पर अष्टतीर्थों की प्रतिष्ठापना की। पास में ही एक विशाल और पवित्र सरोवर भी बनाया। उस ब्रह्म सरोवर का नाम आगे चलकर शिवालय रखा गया।

इस शिवालय की भी एक कथा है–

कैलाश पर शिव–पार्वती शतरंज खेल रहे थे। खेलते समय पार्वती ने दाँव जीत लिया। इस से शंकरजी गुस्सा हुए। वे दक्षिण की ओर चले गए। सह्यद्रि के एक पठार पर जहाँ शीतल हवा है; बस गए। उस प्रदेश को महेशमौली म्हैसमाल यह नाम दिया गया। शंकर की खोज में पार्वती भी वहाँ पहुँच गई। उस स्थान पर पार्वती ने भिल्लीण वेश में भगवान शंकर का मन मोह लिया। दोनों उस वन में कुछ समयतक सानंद रहे।

उस वन को काम्यक वन यह नाम प्राप्त हुआ। काम्यक वन के उस महेशमौल या भैंसमाल प्रदेश में कौओं को आना महेशने मना किया था। एक बार

पार्वती प्यासी थी, तब शकरजी जमीन में त्रिशूल घोंपकर पाताल से भोगावती का पानी ऊपर लाये। उसी को शिवालय तीर्थ कहा जाता हैं

आगे शिवालय तीर्थ का विस्तार हुआ। इस शिवतीर्थ में शिवनदी (शिवनानदी) आकर मिलती है, शिवतीर्थ के आगे वह एलगंगा में आकर मिलती है। काम्यवन में जब शिवपार्वती क्रीडा--रत थे तब सुधन्वा नाम का एक आदमी उस वन में शिकार करने आया था। चमत्कार यह हुआ कि सुधन्वा का रूपांतर स्त्री में हुआ। तब उसने शिवालय तीर्थपर घोर तप किया। शंकर प्रसन्न हुए। वास्तव में सुधन्वा पूर्वजन्म में इला नाम की स्त्री बनकर रही थी। अतः भगवान शंकरने उःशाप के रूप में सुधन्वा को एलगंगा बनाया। इस प्रकार पुण्य–सरिता एलगंगा का उद्‌गम काम्यवन में हुआ। आगे वह धारातीर्थ या सीता का स्नानगृह बनकर और ऊँचाई से नीचे उतरकर वेरूल गाँव के पास से आगे निकल गई।

काम्यवन में एक बार कुंकुम और केशर लेकर माँग भरने के लिए पार्वती खड़ी थी। उन्होंने बाएँ हथेली पर कुंकुम–केशर लिया और उस में शिवलाय तीर्थ का पानी मिलाया। बाद में दाहिने हाथ की अँगुली से वे कुंकुम–केशर को मलने लगी। तब चमत्कार यह हुआ कि उस कुंकुम का शिवलिंग बन गया और उस लिंगमें से एक दिव्य ज्योति प्रकट हुई। इस बात से पार्वती आश्चर्य से देखने लगी। तब शंकर भगवान बोले–

"यह लिंग था अगाध पाताल में। वह निकाला त्रिशूल से।

तब एक उबाल आया भू–मंडल से। पानी के साथ।" (काशीखंड)

पार्वती ने उस दिव्य ज्योति को पत्थर के लिंग में रखा और विश्वकल्याण के लिए लिंगमूर्ति की वहाँ प्रतिष्ठापना की। उस पूर्ण ज्योतिर्लिंग को कुंकुमेश्वर नाम रखा गया। लेकिन दाक्षायणी ने घर्षण के द्वारा उस लिंग का निर्माण किया था इसलिए ज्योतिर्लिंग को घृष्णेश्वर नाम दिया गया।

दक्षिण दिशा स्थित देव पर्वत पर अपनी पति परायणा सुन्दर पत्नी सुदेहा के साथ भारद्वाज गोत्र वाला सुधर्मा नामक वेदज्ञ ब्राह्मण रहता था सुदेहा के यहां कोई सन्तान नहीं हुई, इस कारण वह अत्यन्त दुःखी रहती थी। वह आये दिन अपने पडौसियों के व्यग्य बाणों तथा अपने अपमान आदि की बात कहती परन्तु तत्वज्ञ सुधर्मा इधर ध्यान नहीं देते थे। अन्ततः एक दिन आत्मघात की धमकी देकर सुदेहा ने अपने पति को दूसरे विवाह के लिये राजी कर लिया। अपनी बहन धुश्मा को बुलाकर उसका अपने पति से विवाह कर दिया और किसी प्रकार की ईर्ष्या न करने का दोनों का आश्वासन दिया।

समय बीतने पर धुश्मा--पुत्रवती हुई और यथा समय उस पुत्र का विवाह

हुआ। इधर यद्यपि सुधर्मा और धुश्मा दोनों की सुद्रेहा का बहुत आदर करते थे। परन्तु उनमें ईर्ष्या द्वेष इतना परिपक्व और सुदृढ़ हो गया था कि उसने धुश्मा के सोते हुए युवा बालक की हत्या करके शव को समीपस्थ तालाब में फेंक दिया।

प्रातः काल घर में कोहराम मच गया। धुश्मा पर तो दुःख का तुषारापात हो गया, परन्तु व्याकुल होते हुए भी धुश्मा ने नित्य की भाँति पूजन न छोड़ा वह तालाब में जाकर एक सौ शिवलिंग बनाकर उन्हें पूजने लगी। ज्योंहि विसर्जन करके वह घर की ओर मुड़ी त्योंहि उसे अपना पुत्र तालाब पर खड़ा मिला और शिवजी ने खुश होकर सुदेहा के पाप की पोल खोल दी और उसे मारने के लिये वे उद्यत हो गए। धुश्मा ने हाथ जोड़कर शिवजी की विनती की और उनसे सुदेहा का अपराध क्षमा करने के लिए कहा। इसके अतिरिक्त धुश्मा ने अत्यन्त विनीत शब्दों में शिवजी से विनती की कि यदि वे उस पर प्रसन्न है तो संसार की रक्षा के लिये वे सदा यहीं निवास करें।

शिवजी ने उसकी प्रार्थना स्वीकार कर ली और धुश्मेश नाम से अपने शुभ ज्योतिमय लिंग द्वारा वहां स्थित हो गये।

परम शिवभक्त भोसले (वेरूल के पटेल) को घृष्णेश्वर की कृपा से साँप की बाँबी में बड़ा खजाना प्राप्त हुआ था। उस धन में से उन्होंने मंदिर का जीर्णोद्धार किया और शिखरशिंगणापुर में तालाब बनवाया। बाद में भोसले खानदान में प्रत्यक्ष भोलेनाथ ने अवतार लेकर भोसले घराने का नाम रोशन किया था।

गौतमीबाई (बायजाबाई) और अहिल्यादेवी होलकरने बादमें घृष्णेश्वर मंदिर का जीर्णोधार किया २४०X१८५ फीट लम्बाई–चौड़ाई का मंदिर आज भी मज़बूत और सुंदर दिखाई देता है। मंदिर के अर्धऊँचाई के लाल पत्थर पर दशावतार के दृश्य दर्शानेवाली तथा अन्य अनेक देवताओं की मूर्तियाँ खुदवाई गई हैं। जयराम भाटिया नाम के दाता ने सोने की चद्दर से मढा हुआ ताम्रशिखर बनवाया है। २४ पत्थर के खम्भों पर सभामंडप बनवाया है। खम्भोंपर अति उत्तम नक्काशी तराशी गई है। चित्र भी सुंदर दिखाई देते हैं। गर्भगश्ह १७X१७ फीट का है और लिंगमूर्ति पूर्वाभिमुख रखी हुई है। सभामंडप में भव्य नंदीकेश्वर है।

देवस्थान का कारोबार एक नियुक्त समिति के द्वारा चलता है। दिन में ही बार नक्कारा बजता है, पूजा और आरती की जाती है। गर्भगृह में दर्शन के लिए जाते समय कपड़े उतारकर जाना पड़ता है। सोमवार, प्रदोष, शिवरात्रि तथा अन्य पर्वोंपर यहाँ बहुत बड़ा मेला लगता है। भीड़–भाड़ तो हमेशा लगी रहती है। २१ गणेश पीठों में से एक पीठ लक्षविनायक नाम से प्रसिद्ध है। सबसे पहले लक्षविनायक के दर्शन किये जाते है। इस प्रदेश में हमेशा 'शिवनाम' का घोष लगा रहता है।

ओऽम् नमः शिवाय। ओऽम नमः शिवाय!

6/2/1, 26/3/1 (NM), 8/4/1 (NM), ... 16/11, 3/1 ... 19/8/1 (M)
30/6/03, 10/3/4

श्रीरावणकृत-शिवताण्डव-स्तोत्रम

जटाटवीगलज्जलप्रवाहपावितस्थले
गलेऽवलम्ब्यलम्बितां भुजङ्गतुङ्गमालिकाम्।
डमड्डमड्डमड्डमन्निनादमड्डमर्वयं
चकारचण्डताण्डवं तनोतु नः शिवः शिवम्।।१।।

जटाकटाहसम्भ्रमभ्रमन्निलिम्पनिर्झरी
विलोलवीचिवल्लरीविराजमानमूर्धनि।
धगद्धगद्धगज्ज्वलल्ललाट् पट्टपावके
किंशोरचन्द्रशेखरे रतिः प्रतिक्षणं मम।।२।।

धराधरेन्द्रनन्दिनीविलासबन्धुबन्धुर–
स्फुरद्दिगन्तसन्ततिप्रमोदमानमानसे।
कृपाकटाक्षधोरणीनिरूधदुर्धरापदि
क्वचिद्दिगम्बरे मनो विनोदमेतु वस्तुनि।।३।।

जटाभुजङ्.गपिङ्.गलस्फुरत्फणामणिप्रभा–
कदम्बकुङ्.कुमद्रवप्रलिप्तेदिग्वधूमुखे।
मदान्धसिन्धुरस्फुरत्वगुत्तरीयमेदुरे
मनो विनोदमद्भुतं विभर्तुभूतभर्तरि।।४।।

सहस्त्रलोचनप्रभृश्त्यशेषलेखशेखर–
प्रसूनधूलिधोरणीविधूसराङ्.घ्रपीठभूः!
भुजङ्.गराजमालया निबद्धजाटजूटकः
श्रियै चिराय जायतां चकोरबन्धुशेखरः।।५।।

ललाटचत्वरज्जलद्धनञ्जयस्फुलिङ्.गभा–
निपीतपञ्चसायकं नमन्निलिम्पनायकम्।
सुधामयूखलेखया विराजमानशेखरं
महाकपालिसम्पदे शिरोजटालमस्तु नः।।६।।

करालभालपट्टिकाधगद्धगद्धगज्ज्वल–
द्धनञ्जयाधरीकृतप्रचण्डपञ्चसायके।
धराधरेन्द्रनन्दिनीकुचाग्रचित्रपत्रक–
प्रकल्पनैकशिल्पिनि त्रिलोचने मतिर्मम।।७।।

नवीनमेघमण्डली निरूद्धदुर्धरस्फुर–
त्कुहू निशीथिनीतमः प्रबन्धबन्धुकन्धरः।
निलिम्पनिर्झरीधरस्तनोतु कृत्तिसिन्धुरः

कलानिधानबन्धुरः श्रियं जगद्धुरन्धर।।८।। 7/7/03, 17/5/4

प्रफुल्लनीलपङ्.कजप्रपञ्चकालिमच्छटा
विडम्बिकण्ठकन्धरारूचिप्रबन्धकन्धरम्।
स्मरच्छिदं पुरच्छिदं भवच्छिदं मखच्छिदं
गजच्छिदान्धकच्छिदं तमन्तकच्छिदं भजे।।९।।
अखर्वसर्वमङ्.गलाकलाकदम्बमञ्जरी–
रसप्रवाहमाधुरीविजृम्भणामधुव्रतम्।
स्मरान्तकं पुरान्तकं भवान्तकं मखान्तकं
गजान्तकाधकान्तकं तमन्तकान्तकं भजे।।१०।।
जयत्वदभ्रविभ्रमभ्रमद्भुजङ्.मस्फुर–
द्धगद्धगद्धिनिर्गत्करालभालहव्यवाट्।
धिमिद्धिमिद्धिमिध्वनन्मङ गतुङ्.गमङ्.गल
ध्वनिक्रमप्रवर्तितप्रचण्डताण्डवः शिवः।।११।।
दृषद्धिचित्रतल्पयोर्भुजङ्.गमौक्तिकस्त्रजो–
र्गरिष्ठरत्नलोष्ठरत्नलोष्ठयोः सुहृशद्विपक्षपक्षयोः।
तृशणारविन्दचक्षुषोः प्रजामहीमहेन्द्रयोः
समं प्रवर्तयन्मनः कदा सदा शिवं भजे।।१२।।
कदा निलिम्पनिर्झरीनिकुञ्जकोटरे वसन्
विमुक्तदुर्मतिः सदा शिरःस्थमञ्जलिं वहन्
विमुक्तलोललोचनांललामभाललग्नक
शिवेति मन्त्रमुच्चरन् कदा सुखी भवाम्यहम्।।१३।।
इमं हि नित्यमेवमुक्तमुत्त मोन्तमं स्तवं
पठन्स्मरबुवन्नरो विशुद्धिमेति सन्ततम्।
हरे गुरौ सुभक्तिमाशु याति नान्यथागतिं
विमोहनं हि देहिनां सुशङ्करस्य चिन्तनम्।।१४।।

पूजावसानसमये दशवक्त्रगीतं यः शम्भुपूजनमिदं पठति प्रदोषे।
तस्य स्थिरां रथगजेन्द्रतुरङ्.गयुक्ता लक्ष्मी सदैव सुमुखीं प्रददाति शम्भुः।।

27/3/1 (N.M.), 1/5/1 (N.M.), 29/5/1, 19/6/1, 14/7/1 (N.M.), 25/8/1 (N.M.), 17/11, 4/1/1, 8/2/1
24/9/03, 24/5/4/14

रूद्राष्टक

नमामीशमीशाननिर्वाणरूपं विभुं व्यापकं ब्रह्म वेदस्वरूपं।
निजं निर्गुणं निर्विकल्पं निरीहं चिदाकाशमाकाशवासं भजेह।
निराकारमोंकारमूलं तुरीयं गिरा ज्ञानगोतीतमीशं गिरीशं।
करालं महाकाल कालं कृपालं गुणागार संसारपारं नतोहं।

तुषाराद्रि संकाशगौरं गभीरं मनोभूत कोटि प्रभा श्रीशरीरं।
स्फुरन्मौलि कल्लोलिनीचारूगंगा लसद् भाल बालेंदु कठें भुजंगा।
चलत्कुंडलं भ्रूसुनेत्रं विशालं प्रसन्नानंन नीलकठं दयालं।
मृगाधीशचर्माबरं मुंडमालं प्रियं शंकरं सर्वनाथ भजामि।
प्रचंडं प्रकृष्टं प्रगल्भं परेशं अखंडं अजं भानुकोटिप्रकाशं।
त्रयः शूलनिर्मूलनं शूलपाणिं भजेहं भवानीपतिं भावगम्यं।
कलातीत कल्याणकल्पांतकारी सदा सज्जनानंद दाता पुरारी।
चिदानंद संदोहमोहापहारी प्रसीद प्रसीद प्रभो मन्मथारी।
न यावद् उमानाथ पादारविंदं भजंतीह लोके परे वा नराणाम।
न तावत्सुखं शांति संतापनाशं प्रसीद प्रभो सर्व भूताधिवासं।
न जानामि योगं जपं नैव पूजां नतोहं सदा सर्वदा शंभु तुभ्यं।
जरा जन्म दुःखौघतातप्यमानं प्रभो पाहि आपन्नमामीश शंभो।
रुद्राष्टकमिदं प्रोक्तं विप्रेण हरतोषये।
ये पठंति नरा भक्त्या तेषां शंभु प्रसीदति।। 24/11, 6/11, 9/12,
28/311, 9/5/1, 30/5/1, 20/6/1, 15/7/1 (NM), 26/8/1 (M), 21/7/03, 31/5/4 (M)

।। आरती शिवजी की।।

जय शिव ओंकारा, हर जय शिव ओंकारा।
ब्रह्मा विष्णु सदाशिव अर्धगीं धारा।। जय शिव०।।
एकानन चतुरानन पंचानन राजे।
हंसासन गरुड़ासन वृषवाहन साजे।। जय शिव०।। 28/7/03
दो भुज चारु चतुर्भुज दशभुज ते सोहे।
तीनों रुप निर्खता त्रिभुवन मन मोहे।। जय शिव०।।
अक्षमाला बनमाला मुण्डमाला धारी।
मृग मद चन्दा सोहे भोले शुभकारी।। जय शिव०।।
श्वेताम्बर पीताम्बर बाघम्बर अंगे।
ब्रह्मादिक सनकादिक भूतादिक संगे।। जय शिव०।।
कर में श्रेष्ठ कमण्डल चक्र त्रिशूल धर्ता।
जग कर्ता जग हर्ता जग पालन कर्ता।। जय शिव०।
ब्रह्मा विष्णु सदाशिव कानन अविवेका।
प्रणवाक्षर के मध्य यह तीनों एका।। जय शिव०।।
त्रिगुण स्वामी जी की आरती जो कोई नर गावे।
कहत शिवानन्द स्वामी मन वाँछित फल पावे।। जय शिव०।। 25/11, 7/1/1
7/8/4, 15/2/1, 29/3/1, 3/5/1, 31/5/1, 21/6/1, 16/7/1 (NB), 1/9/1 (M), 4/8/03 (M)

आरती भगवान् जगदीश्वर की

ऊँ जय जगदीश हरे, स्वामी जय जगदीश हरे।।
भक्त जनों के संकट, छन में दूर करे।। ऊँ जय।।
जो ध्यावै फल पावै, दुख बिनसै मनका।। प्रभु।।
सुख–संपति घर आवै, कष्ट मिटै तनका।। ऊँ जय।।
मात–पिता तुम मेरे, शरण गहूँ किसकी।। प्रभु।।
तुम बिनु और न दूजा, आस करूँ किसकी।। ऊँ जय।।
तुम पूरन तरमात्मा, तुम अंतर्यामी।। प्रभु।।
पारबह्म परमेश्वर, तुम सब के स्वामी।। ऊँ जय।।
तुम करुणा के सागर, तुम पालन–कर्ता।। प्रभु।।
मै मूरख खल कामी, कृपा करो भर्ता।। ऊँ जय।।
तुम हो एक अगोचर, सब के प्राणपति।। प्रभु।।
किस विधि मिलूँ दयामय! मै तुमको कुमती।। ऊँ जय।।
दीनबंधु दुखहर्ता, तुम ठाकुर मेरे।। प्रभु।।
अपने हाथ उठाओ, द्वार पड़ा तेरे।। ऊँ जय।।
विषय–विकार मिटाओ, पाप हरो देवा।। प्रभु।।
श्रद्वा–भक्ति बढ़ाओ, संतन की सेवा ।। ऊँ जय।।

30/3/1, 5/5/1, 1/6/1, 22/6/1, 17/7/1 (NM), 2/9/1 (M), 26/11, 8/1/1, 16/2/1
15/6/5/, 1/18/23

महिम्न स्तोत्रातील शिवस्तुती

"श्मशानेष्वा क्रीड़ा, स्मरहर पिशाचाः सहचरः
चिताभस्मालेपः स्त्रगंतिनृकरोटी परिकरः।।
अमड्ंगल्यं शीलं, तव भवतु नामैवमखिलं–
तथापि स्मर्तृणांवरद परमं मड्गलमसि!।"
"त्वमर्कस्त्वं सोमस्त्वमसि पवनस्त्वं हुतवहः
त्वमापस्त्वं व्योम त्वमुधरणिमरात्मा त्वमितिच।।"
"असितागिरिसम स्यात् कज्जलं सिन्धुपात्रे–
सुरतरूवरशाखा लेखनी पत्रमुर्वी।।
लिखति वदि गृहीत्वः शारदा सार्वकालं–
तदपि तब गुणानामीश पारं न याति।।"
"इत्येषा वाड्मयी पूजा श्रीमच्छड्कर पादयोः।
अर्पिता तेन देवेशः प्रीयता में सदाशिवः।।" 5/7/4

27/11, 9/1/1, 17/2/1
4/5/1, 6/5/1, 2/6/1 (NB), 23/6/1, 18/7/1 (NM), 8/7/1 (M),
Shift to PALI BANDRA

श्रीशिवपञ्चाक्षरस्तोत्रम्

नागेन्द्रहाराय त्रिलोचनाय
भस्माङ्गरागाय महेश्वराय ।
नित्याय शुद्धाय दिगम्बराय
तस्मै 'न' काराय नमः शिवाय ॥ १ ॥

मन्दाकिनीसलिलचन्दनचर्चिताय
नन्दीश्वरप्रमथनाथमहेश्वराय ।
मन्दारपुष्पबहुपुष्पसुपूजिताय
तस्मै 'म' काराय नमः शिवाय ॥ २ ॥

शिवाय गौरीवदनाब्जवृन्द-
सुर्याय दक्षाध्वरनाशकाय ।
श्री नीलकण्ठाय वृषध्वजाय
तस्मै 'शि' काराय नमः शिवाय ॥ ३ ॥

वसिष्ठकुम्भोद्भवगौतमार्य-
मुनीन्द्रदेवार्चितशेखराय
चन्द्रार्कवैश्वानरलोचनाय
तस्मै 'व' काराय नमः शिवाय ॥ ४ ॥

यक्षस्वरूपाय जटाधराय
पिनाकहस्ताय सनातनाय ।
दिव्याय देवाय दिगम्बराय
तस्मै 'य' काराय नमः शिवाय ॥ ५ ॥

पञ्चाक्षरमिदं पुण्यं यः पठेच्छिवसन्निधौ ।
शिवलोकमवाप्नोति शिवेन सह मोदते ॥ ६ ॥

इति श्रीमच्छङ्कराचार्यविरचितं शिवपडञ्चाक्षरस्तोत्रं सम्पूर्णम् ।